नमो बुद्धाय

NAMO SAKYAMUNI BUDDHA

May every living being, drowning and adrift, Soon return to the Pure land of Limitless Light !
Namo Amitabha !

डॉ. आम्बेडकर की धम्म-क्रांति

धर्म और धर्म-निरपेक्ष राज्य

महास्थविर संघरक्षित

Printed for free distribution by
The Corporate Body of the Buddha Educational Foundation
11F., 55 Hang Chow South Road Sec 1, Taipei, Taiwan, R.O.C.
Tel: 886-2-23951198 , Fax: 886-2-23913415
Email: overseas@budaedu.org
Website:http://www.budaedu.org
This book is strictly for free distribution, it is not for sale.
यह पुस्तिका विनामूल्य वितरण के लिए है बिक्री के लिए नही ।

डॉ. आम्बेडकर की धम्म-क्रांति

DR. AMBEDKAR'S DHAMMA REVOLUTION

व्याख्याता : **महास्थविर संघरक्षित**
अनुवादक : **अनंत हुमने**

प्रकाशकीय

अपने भारत जैसे देश में, ज्यो अगणित प्रकार की विषमताओंसे भरा हुआ है, एक नये समाज का गठन कैसे किया जाय ? यह एक अत्यंत चिन्तनीय प्रश्न हम सब के सामने है । खास कर जब हम अिक्कीसवी सदी में पदार्पण करने जा रहें हैं और उर्वरीत जगत के खंदे से खंदा मिलाने का सपना देख रहें हैं यह समस्या और अधिक चिन्तन का विषय बनी है । हमारे समाज जीवन को संपूर्ण रूप से व्यापनेवाली विषमता को हटाये बगैर और हर इन्सान के प्रती पूरे न्याय की नीति को अपनाये बगैर हम इक्कीसवी सदी में प्रवेश करने लायक हो ही नहीं सकते ।

पूज्य बाबासाहेब डॉ. भीमराव आंबेडकरजीने इस दिशा में आज से तीस साल पहले अपना कदम अग्रसर किया था, जब उन्होंने अपने लाखों अनुयायियों के साथ बुद्धधम्म का स्वीकार किया था । उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के पश्चात, जिस संविधान का निर्माण किया, उसे देशको अर्पित करते वक्त स्पष्ट रूपसे चेतावणी दी थी की अगर हम केवल राजकीय समता को प्राप्त कर के स्वस्थ रह जाय और जल्द से जल्द हमारे समाज में उपस्थित सामाजिक और आर्थिक विषमा नष्ट न कर पाय, तो हमारा यह राजकीय प्रजातंत्र कामयाब नहीं हो सकता । विषमता के शिकार हुए लोग इसे जल्द ही उखाडकर फेकें बगैर नहीं रहेंगे । अतएव स्वतंत्रता, समता, बंधुता तथा न्याय इन चार सूत्रोंपर आधारित नये समाज का निर्माण करने हेतु उन्होंने बुद्धधम्म के आदर्श का स्विकार किया । इसीलिए उनके धर्मान्तर को हम **' धम्म-क्रांति '** कहते हैं । दुर्भाग्य से इस विषय का अनन्य साधारण महत्त्व आज तक भारतवासियों के लिए अज्ञात रहा और विचारचिन्तकों की दृष्टि से उपेक्षित भी । पू. महास्थाविर संघरक्षितजी, ज्यो बाबासाहब डॉ. भीमराव आंबेडकरजी के निकटवर्ती थे, इस विषय के मर्मग्राही ज्ञाता है । उनका यह बम्बई में दिया गया अभिभाषण बाबासाहब की चिन्तनधारा को पूर्ण रूपसे स्पष्ट करता है । आशा है कि यह हमारे पाठकों को नया पथ प्रदर्शन करने में उपयुक्त होगा तथा प्रेरणा देगा ।

गत ७ वर्षोंसे त्रैलोक्य बौद्ध महासंघ सहाय्यक गण की ओर से त्रिरत्न

ग्रंथमाला के नाम से बुद्ध धम्मसंबंधी तथा बाबासाहब के बारे में अंग्रेजी और मराठी में कुछ साहित्य का प्रकाशन किया जा रहा है। अब हमने हिंदी में भी नियमित रूपसे धम्म साहित्य का प्रकाशन करना शुरू किया है। ' डॉ. आंबेडकर की धम्मक्रांती ' यह इस दिशामें किया गया पहला प्रयास है। आशा है पाठक इसका उचित स्वागत करेंगे।

- धम्मचारी विमलकीर्ती

डॉ. बी. आर्. आम्बेडकर जी द्वारा नागपुर में बुद्धाब्द २५०० । १४.१०.१९५६ को बौद्ध-धम्म-ग्रहण करनेके अवसरपर

शुभ संदेश

इन दिनों जब कि बौद्ध धम्म के प्रति मुँहदेखी सहानुभूति रखनेवालों की संख्या अधिक और सच्ची लगनवालों की नगण्य है, तब धर्म के नाम पर चले आये हुये सभी जीर्ण मतमतान्तरों और कालबाह्य दुराग्रहों के बन्धन तोडकर बुद्ध, धम्म और संघ की खुले आम शरण जाता हुआ एक महान् राष्ट्रीय नेता देखने को मिले, तो वह एक ऐसा विरोधी दृश्य हैं जो अकस्मात ताजगी और उत्तेजना पैदा कर देता है । डॉ. आम्बेडकर आज केवल अकेले ही बुद्ध धम्म का स्वीकार करने के लिये खडे हों तो भी वह घटना युग का महत्त्व रखती है । किन्तु वे अकेले नहीं हैं । इस ऐतिहासिक अवसर पर उनके शिक्षाप्रद उदाहरण का अनुसरण करने के लिये उनके साथ उनके हजारों लाखों अनुयायी तैयार हैं । उनके साथ हैं । सत्य, न्याय और करुणा । जब वे इस धरा पर पुनश्च उदयमान होनेवाले प्रभास्वर धम्मसूर्य की ओर मुँह कर खडे हुये हैं, तब उनके साथ, वे सब महाप्रतापी आध्यात्मिक शक्तियाँ हैं जो मानवी मन को उच्चतर बनाती हैं और सच्ची प्रगति का रास्ता खुला कर देती हैं ।

उनके साथ है भारत का भविष्य ।

कालिंम्पाँग **भिक्षु संघरक्षित**

डॉ. आम्बेडकर की धम्म क्रांति

धम्म भाईयों और बहनों,

इस समय मैं तीन माह की भारत यात्रा पर हूँ और इन तीन महीनों की अवधि में मैं जहाँ तक सम्भव हो, अधिक से अधिक स्थानों पर जा रहा हूँ, अधिक से अधिक लोगों से मिल रहा हूँ और अधिक से अधिक लोगों को धम्म से ज्ञात कर रहा हूँ। इतना ही पर्याप्त नहीं है। मैं इस बात को पक्का करने का प्रयत्न कर रहा हूँ कि धम्मज्ञान का प्रदान धम्म का प्रचार-हमारे बौद्ध कार्यक्रमों का केवल आरम्भ हो, न कि उनका अंत ही। मैं इस व्यवस्था को पक्का करने का प्रयत्न कर रहा हूँ कि इस कार्य को जारी रखने का काम भी ठीक तरह से और संगठित रुप से चलता रहे। इस समय मेरी यात्रा लगभग आधी पूरी हुई है। अब तक मैं चौदह महत्त्वपूर्ण नगरों था महानगरों में से गुजरा हूँ और मैंने सत्ताइस लम्बे व्याख्यान दिये हैं तथा उनके अतिरिक्त अनेक छोटे भाषण भी दिये है। आज रात्रि को मै बम्बई में वापस आया हूँ। मैं आप सभी लोगों को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ हूँ और मास मूव्हमेंट एन्ड बुद्धिस्ट ब्रदरहुड के तत्वावधान में बोलते हुये बहुत आनंदित हुआ हूँ।

एक नये शक्तिशाली संगठन, मास मूव्हमेंट से जो, मैं समझता हूँ, मेरे १९६७ में अंतिम रूपसे लन्दन लौट जाने के पश्चात् प्रारम्भ हुआ, यह मेरा प्रथम वास्तविक परिचय है। मुझे विशेषकर प्रसन्नता इस बात की है कि मैं ऐसे संगठन के तत्त्वावधान में बोल रहा हूँ, जिसने अपने नाम में ' भ्रातृत्व ', शब्द को शामिल किया है। भ्रातृभाव सभी मनुष्यों में होना और विशेषकर सभी बौद्धों में होना आवश्यक है और धम्म का तो वह अभिन्न अंग है। सभी बौद्ध आपस में भाई-बहने हैं। वे सभी एक विशाल आध्यात्मिक परिवार के लोग हैं। इसलिये यह स्वाभाविक ही है कि उन में आपस में अटूट ' मैत्री ' भावना का प्राबल्य हो। यदि हम में एक दूसरे के प्रति प्रबल मैत्री भावना

नहीं है, तो हम सच्चे बौद्ध नहीं हो सकते । यह कोई महत्व की बात नहीं है कि मैं इंग्लैंड का हूँ और आप भारत के हैं । जो खास बात है वह यह हैं कि हम सब मनुष्य हैं, सब बौद्ध हैं और सब डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के अनुयायी तथा प्रशंसक हैं । इसलिए हम सब को एक दूसरे की सहायता करनी चाहिये, हम सब को साथ साथ धम्म के लिये काम करना चाहिये । वास्तविक हम सब के सामने एकही प्रकार की समस्यायें हैं । हम सब के सामने मानवीय समस्यायें हैं । यू कहिए कि हमारे सामने वे समस्याये हैं जो, इस सच्चाई से कि हम मनुष्य हैं, पृथक नहीं की जा सकती, ऐसी सामाजिक आर्थिक, और राजनैतिक समस्यायें हैं । हमारे सामने धार्मिक समस्यायें भी हैं वे समस्यायें जो बौद्ध आंदोलन में अंतर्भूत है और यह भी समस्या कि हमें कैसे बौद्ध होना चाहिये और धम्म के लिये अभी इस बीसवीं सदी में किस तरह काम करना चाहिये । इस लिये यह स्वाभाविक ही है कि हम सब मिलजुलकर इन समस्याओं को हल करने का प्रयत्न करे । वस्तुतः सारे विश्व में केवल एकही बौद्ध आंदोलन है और हम सब उसके अभिन्न अंग हैं ।

दो तीन दिन पूर्व अनागरिक लोकमित्रजीने मुझे एक बडे पीले और सफेद रंग के पोस्टर की एक प्रति दिखलाई जो आज रात्रि की सभा को प्रकाशित करने के लिये छपी गई थी । इस पोस्टर को देखकर मैं प्रसन्न हुआ और विशेषकर प्रसन्न हुआ इस बात को सुनकर कि इसकी सैंकडों प्रतियाँ पूरी बम्बई में लगाई गई हैं । किन्तु इसकी शब्द- रचना को पढकर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ । मैंने देखा कि यद्यपि मेरे भाषण का शीर्षक, अंग्रेजी में ' Buddhism is enough of very 'ism' दिया गया है, तथापि इसका हिंदी में रूपांतर, ' बुद्ध धम्म सबको एकमात्र पर्याय है, ' ऐसा किया गया है । मैं यह अर्थ समझता हूँ कि ' (सब वादों के लिये अब) गत्यन्तर नहीं अन्यत्र बुद्ध के धम्म के सिवा । ' अब मैं यह नहीं निश्चित कर पा रहा हूँ कि, अंग्रेजी शब्दावली और हिन्दी शब्दावली में से इस समय मुझे किस पर बोलना चाहीये । फिर भी यह बात वास्तविक महत्त्व की नहीं है । क्यों कि मैं बौद्ध धर्म पर ही बोलने जा रहा हूँ । मैं बोलने जा रहा हूँ सामुदायिक धम्म-परिवर्तन के आन्दोलन पर, जिसका उद्घाटन डॉ. आंबेडकरने किया था । और उस आंदोलन से

संबंधित कुछ समस्याओंपर। मेरा विश्वास है कि आप में से अधिकांश लोक चाहेंगे कि मैं इसी संबंध मे बोलूं और यही बात पोस्टर बनवाते समय इस सभा के आयोजकों के मन में होगी। मैं तीन शीर्षकों में इस विषय-वस्तु को विभाजित करुंगा और आपके सामने तीन प्रश्न रखूंगा जिन पर हमें स्पष्ट रूप से और सावधानी से विचार करना होगा :

(१) डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धम्मका क्यों स्वीकार किया ?

(२) जिस सामुदायिक धर्म परिवर्तन के आन्दोलन का, उद्‌घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया था उसका बौद्ध धम्म में क्या महत्त्व है ?

(३) उस आंदोलन के सामने आज जो समस्यायें हैं उनका मूल कारण क्या है ?

(१) डॉ. आम्बेडकर ने बौद्ध धम्म का क्यों स्वीकार किया ?

इस प्रश्न को चार उपप्रश्नों में विभाजित किया जा सकता है :

(अ) डॉ. आम्बेडकर ने हिंदुधर्म का त्याग क्यों किया ? (उचित ही है, कि यह प्रश्न पहले आता है)

(ब) उन्होंने अन्य किसी धर्म के बजाय बौद्ध धम्म ही क्यों चुना ?

(क) वे बिना किसी धर्म के, केवल वैंसे ही, क्यों नहीं रहे ?

(ड) वे मार्क्स के अनुयायी क्यों नही बने ?

मैं क्रम से इन प्रश्नों पर अपने विचार प्रकट करना चाहता हूँ। ऐसा करने पर खुद-ब-खुद हमारा पहला प्रश्न, याने डॉ. आम्बेडकर ने बौद्ध धर्म का क्यों स्वीकार किया, इसका उत्तर मिल जाएगा।

(अ) डॉ. आम्बेडकर ने हिंदुधर्म का त्याग क्यों किया ?

इस प्रश्न का उत्तर सरल है। यह कोई बिकट बात नहीं है। हम सभी जानते हैं कि डॉ. आम्बेडकर एक अछूत परिवार में पैदा हुये थे। इसलिये उन्हे अपने व्यक्तिगत कटू तथा भयंकर अनुभव से यह मालूम था कि सवर्ण

हिंदुओं द्वारा अछूतों से कैसा व्यवहार किया जाता है । उन्होंने यह भी देखा था कि केवल उनका उदाहरण ही अद्वितीय नहीं था वरन् सम्पूर्ण भारत में लाखों लोगों से उसी प्रकार अमानवीय तरीके से व्यवहार किया जा रहा था। अनेक वर्षों तक डॉ. आम्बेडकर ने सवर्ण हिंदुओं के हृदय परिवर्तन का प्रयत्न किया ताकि वे अपना रवैया बदले और व्यवहार-तरीकों में सुधार करें । किन्तु उन्हे कोई सफलता नहीं मिली । अन्त में वे इस परिणाम पर पहुंचे कि, कम से कम व्यवहार में तो सही, हिंदूधर्म तथा अस्पृश्यता अभिन्न हैं, और यदि कोई अछूतपन के अभिशाप से मुक्त होना चाहे- जाति व्यवस्था के दानव से अपने को मुक्त करना चाहे- तो उसे हिंदुत्व का पूर्ण रूप से त्याग करना होगा । इसलिये सन १९३५ में उन्होंने यह घोषणा की, ' यद्यपि मैं हिंदू होकर पैदा हुआ हूँ, वरन् हिंदु रहकर मरना नहीं चाहता । '' संक्षेप में यही कारण हैं किं जिसकी वजह से डॉ. आम्बेडकरने हिंदुधर्म का त्याग किया । उन्होंने देखा कि हिंदुत्व की परिधि में अछूत होकर जन्मनेवालों के लिये मनुष्य के समान जीवन जीना असम्भव है । अर्थात् वह सभ्यता और सन्मान के साथ जी नहीं सकता ।

(ब) डॉ. आम्बेडकर ने अन्य किसी धर्म के बजाय बौद्ध धर्म को ही क्यों चुना ?

इस प्रश्नपर मुझे अपने विचार प्रकट करने के लिये अधिक समय देना होगा । तथापि वह सम्भव नहीं होगा । डॉ. आम्बेडकर के अनुसार इस समय विश्व में चार ऐसे धर्म हैं, जिन्होने न केवल अतीत में ही विश्व को आंदोलित किया वरन् अभी भी उनका जनता के बहुत भारी हिस्से पर अच्छा खासा प्रभाव है । ये चार धर्म हैं : बौद्ध, ईसाई, इस्लाम और हिंदू धर्म जिनके संस्थापक क्रमशः बुद्ध, ईसा मसीह, मुहम्मद और कृष्ण हैं । इन बडे बडे संस्थापकों के विषय में डॉ. आम्बेडकर को कुछ कहना है । डॉ. आम्बेडकर कहते हैं कि ईसा मसीह ने दावा किया कि वह ईश्वर का पुत्र है और आग्रह किया कि वे-जो ईश्वरीय राज्य में प्रवेश पाना चाहते है-जो मुक्तिलाभ करना चाहते हैं- उन्हे प्रभु ईसा मसीह के ईश्वर का पुत्र होने की बात को मान्यता दे, क्योंकि बगैर उसके उन्हें मुक्ति नहीं मिलेगी । डॉ. आम्बेडकर कहते हैं कि

ईसाई धर्म का यही मुख्य आधार है। आगे डॉ. आम्बेडकर कहते हैं कि मुहम्मद ने यह दावा किया कि वह धरती पर ईश्वर का संदेशवाहक (पैगाम लानेवाला) है। वस्तुतः उसने यह दावा किया कि वह अंतिम पैगम्बर है। उसके बाद कोई पैगम्बर नहीं होगा। रहा सवाल कृष्ण का। तो डॉ. आम्बेडकर कहते हैं कि वह ईसा मसीह या मुहम्मद से भी एक कदम आगे चला गया। कृष्ण ने दावा किया कि वह स्वयं ईश्वर है, ' परमेश्वर ' है। इस प्रकार डॉ. आम्बेडकर ने इन तीन धर्मों के संस्थापकों और उनके दावों के सम्बन्ध में कहा है।

इसके पश्चात् डॉ. आम्बेडकर बुद्ध के संबंध में कहते हैं। वे कहते हैं कि बुद्धने, जिसने अपने मानवीय प्रयत्न से उच्चतम नैतिक तथा परम पूर्ण अध्यात्मिक स्थिति को प्राप्त किया, खुद को मनुष्य घोषित करने के अतिरिक्त और कोई दावा नहीं किया। डॉ. आम्बेडकर के वर्गीकरण के अनुसार ईसा, मुहम्मद और कृष्ण सभी ने ' मोक्षदाता ' होने का, याने मनुष्य को मुक्ति देने का या उसके लिये मुक्ति लाने का दावा किया। किंतु बुद्धने केवल ' मार्ग दाता ' होने का अर्थात् मुक्ति का प्रथप्रदर्शक होने का दावा किया जिस पथ पर अपने प्रयत्नों से चलकर हर इंसान मुक्ति प्राप्त कर सकता है। इसलिये बौद्ध धम्म को हम मानवीय धर्म कह सकते हैं यद्यपि वह ' मानवीय ' पश्चिम के उस आधुनिक संकीर्ण अर्थ में नहीं हैं। बौद्ध धम्म एक ऐसा धर्म है, जो मनुष्य को महत्व देता है। वह ईश्वर को महत्व नहीं देता। वस्तुतः वह ईश्वर को कोई स्थान नहीं देता। (दूसरे धर्मों में ईश्वर को ही महत्व है मनुष्य को नहीं। बुद्ध के धम्म में मनुष्य को ही महत्व है-) यही वह कारण है, जिस से कि डॉ. आम्बेडकर ने अन्य धर्मो को छोडकर बौद्ध धम्म को ही चुना। उन्होंने इसे इसलिये चुना क्यों कि यह एक मानवीय, अनीश्वरवादी धर्म है। जब कि ईसा खुदा का बेटा, मुहम्मद खुदा का पैगम्बर और कृष्ण स्वयं खुदा ही कहलाता हैं, वहाँ बुद्ध का खुदा से कोई सम्बन्ध नहीं है। बौद्ध धर्म का ईश्वर से कोई संबंध नहीं है। बौद्ध धर्म के अनुसार ईश्वर का अस्तित्व ही नहीं है। बौद्ध धर्म के शब्दकोष में ' ईश्वर ' शब्द नहीं मिलता।

बुद्ध और दूसरे तीन धर्मों के संस्थापकों या आद्य गुरुओं में एक और भी भेद है। ईसा, मुहम्मद और कृष्ण तीनों ने दावा किया कि उनका उपदेश

गलती की सम्भावना से परे है और इसलिये उसके सम्बध में कोई शंका नहीं की जा सकती। मजबूरन ही नहीं बल्कि जबरन् मनुष्य को वह स्वीकार करना पडा। आखिर ईसा ईश्वर के पुत्र, मुहम्मद ईश्वर के दूत और कृष्ण स्वयं ईश्वर जो ठहरें। इसलिये जो कुछ उपदेश उन्होंने दिया वह परोक्ष या अपरोक्ष रूप से ईश्वर से ही आया है। ईश्वर सर्वज्ञ है। फिर उन्होंने जो कुछ बतलाया वह गलत कैसे हो सकता था ? किंतु बुद्धने अपना उपदेश गलती की सम्भावना से परे होने का दावा नहीं किया, या अपने उपदेश को ईश्वरीय नहीं कहा। उसने साफ कहा कि उसका उपदेश स्वयं उसके विचारपर अधिष्ठित है- मनुष्य के नाते उसने जो निजी अनुभव किया उस पर अधिष्ठित है। उसे दूसरे तब स्वीकार करें जब अपने विचार और अनुभव से उसे सही पायें। वास्तव में बुद्ध इतना आगे बढे कि उन्होंने यहाँ तक ऐलान किया कि उनके शिष्यों ने उनके शब्दों की परीक्षा करनी चाहिये। जिस प्रकार एक सुनार सोने की परीक्षा करता है, उसी प्रकार उन्हे उनके उपदेशों की परिक्षा करनी चाहिये। दूसरे किसी भी धर्मसंस्थापक ने कभी यह बात नहीं कही। दूसरे धर्मप्रचारक, याने अबौद्ध धर्मसंस्थापक आज भी आपको उनमें विश्वास रखने के लियें कहते हैं। लेकिन बुद्ध ने ऐसा कभी नहीं किया। बुद्ध ने कहा कि हम स्वयं अपने लिये उनके शब्दों की परीक्षा करें। उन्होंने कहा कि हम उनके उपदेशों के सत्य को अपने अनुभव की अग्नि में तपाकर देखें। यही कारण है कि डॉ. आम्बेडकर जीने दूसरे किसी धर्म को न अपनाकर बौद्ध धम्म को ही चुन लिया।

डॉ. आम्बेडकर द्वारा बौद्ध धम्म को ही चुनने के और भी कारण हैं। डॉ. आम्बेडकर जी कहते हैं- बौद्ध धम्म नैतिकता पर अधिष्ठित है। जब कि हिंदू धर्म स्वजाति के निहित कर्मों पर अधिष्ठित है। इसके अतिरिक्त बौद्ध धम्म विज्ञान से असंगत नहीं है। यदि हम बोद्ध ग्रंथों में कोई विवरण आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान के विरुद्ध पाते हैं, तो बौद्ध होने के नाते, हम उसे अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र हैं। अन्य धर्मानुयायियों को इतनी स्वतंत्रता नहीं है। उदाहरणार्थ, यदि कोई ईसाई बाइबिल में कोई ऐसा विवरण पाता है, जो वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान के विरुद्ध हो, तो वह उसे अस्वीकार करने के लिये स्वतंत्र नहीं है। उसे उस विवरण को स्वीकार करना ही होगा। या फिर

खींचातानी कर के, बनावटी ढंग से, किसी तरह समझाना होगा । क्यों कि बाइबिल गलत नहीं हो सकती । बाइबिल ईश्वर का वचन है ।

संक्षेप में, यही कारण है कि डॉ. आम्बेडकर ने दूसरे किसी धर्म के बजाय बौद्ध धम्म ही चुना ।

(क) डॉ. आम्बेडकर बिना किसी धर्म के वैसे ही क्यों न रहें ?

आज दुनिया में, विशेषकर पश्चिम में, अनेक लोग बिना किसी धर्म के हैं । उन का उदाहरण डॉ. आम्बेडकर ने क्यों नहीं अपनाया ? जब उन्होंने एक बार हिंदू धर्म का त्याग कर दिया तब वे बिना किसी धर्म को स्वीकार किये क्यों नहीं रहें ? पहली बात यह है कि डॉ. आम्बेडकर स्वयं धार्मिक प्रवृत्ति के पुरुष थे । उन्होने स्वयं धर्म की जरूरत महसूस की । दूसरी बात यह कि समाज धारणा के लिये नैतिकता के अर्थ में धर्म की अनिवार्य आवश्यकता में उनका विश्वास था ।उनका विश्वास था कि नीति नियामक होने पर ही समाज की धारणा हो सकती है । क्यों कि क़ानूनी नियामकता, दूसरे शब्दों में शक्ति पर आधारित नियामकता पर्याप्त नहीं होती । उनका कहना था, कि समाज सलामत तभी हो सकता है जब समाज में बहुसंख्यक लोग धर्म के अधिकार को स्वीकार करें अर्थात नैतिकता के अधिकार को माने । डॉ. आम्बेडकर ने स्थापित किया कि, नैतिकता के अर्थ में धर्म प्रत्येक समाज का नियामक तत्व होता है । वस्तुतः वे इससे भी आगे गये । उन्होंने कहा कि समाज का अनुशासन करने की सामर्थ्य रखने के लिये धर्म का कुछ शर्तें पूरी करनी होती हैं । उसे विज्ञानसंगत या बुद्धिसंगत होना चाहिये । उसे स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के मूलभूत तत्वों को मान्य करना चाहिये और उसे गरीबी का समर्थन नहीं करना चाहिए, तथा उसे महत्ता नहीं देनी चाहिये । डॉ. आम्बेडकर के अनुसार बौद्ध धम्म इन सब कसौटियों पर खरा उतरता है । उनके विचार से सच देखा जाय तो केवल बौद्ध धम्मही ऐसा धर्म है जो इन परिक्षाओं में उत्तीर्ण हुआ है । इसलिए बौद्धधम्म समाज का नियामक तत्त्व बन सका ।

अंततः डॉ. आंबेडकर का विश्वास था कि विश्व को धर्म की आवश्यकता है। इस नविन विश्व, इस आधुनिक विश्व, इस बीसवी शताब्दी के विश्व को प्राचीन काल के विश्व की अपेक्षा धर्म की बहुत ज्यादा जरूरत है। इस नये विश्व को, सच तो यह है, कि अनिवार्यतः धर्म की आवश्यकता है और उनके अनुसार वह धर्म केवल बुद्ध का धम्म ही हो सकता है। इतना ही नहीं, डॉ. आंबेडकर का कहना है कि बुद्ध ने केवल अहिंसा के सिद्धान्त का ही उपदेश नहीं दिया, उन्होने स्वतंत्रा के तत्त्व का भी पाठ पढाया। सामाजिक, वैचारिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्वतंत्रता का, और साथ ही साथ समता का सिद्धान्त भी ! और सत्य है, कि मनुष्य के सामाजिक जीवन के अनेक पहलुओं को उनकी शिक्षा स्पर्श करती है। वास्तव में बुद्ध की शिक्षा अत्याधिक आधुनिक है। बुद्ध का मुख्य चिन्तन यह है कि मनुष्य इस जीवन में ही, इस धरती पर ही निर्वाण प्राप्त करे। उन्होंने मनुष्य को केवल मृत्यू के पश्चात स्वर्ग में मुक्ति पाने का बचन नहीं दिया। डॉ. आंबेडकर के अनुसार, विश्व को धर्म की इसलिये जरूरत है। यही कारण था कि डॉ. आम्बेडकर हिंदू धर्म का परित्याग करने के पश्चात बिना किसी धर्म के वैसे ही नहीं रहें। उन्होंने देखा कि समाज को अपने अस्तित्व के लिए धर्म की अनिवार्य आवश्यकता है। पूरे विश्व के अभ्युदय के लिये धर्म की आवश्यकता है बशर्ते कि वह धर्म बौद्धधम्म ही हो।

(ड) डॉ. आम्बेडकर मार्क्स के अनुयायी क्यों नहीं बने ?

डॉ. आम्बेडकर ने कहा कि वे मार्क्स से सहमत थे, किन्तु कुछ हद तक। दुनिया में शोषण जैसी चीज है, इस बात पर वे सहमत थे। वस्तुतः उन्होंने इस शोषण का बुद्धके ' दुःख आर्य सत्य ' से मेल किया। डॉ. आम्बेडकर इस बात से भी सहमत थे, कि दुनिया में जो शोषण है, उसका अन्त व्यक्तिगत सम्पत्ति को मिटाने से ही हो सकेगा और वे मार्क्स से इस बात में भी सहमत थे, कि व्यक्तिगत सम्पप्ति को मिटा देना चाहिये। लेकिन यह किस प्रकार किया जाना चाहीये ? यहाँपर डॉ. आम्बेडकर मार्क्स से सहमत नहीं थे वे बुद्ध से सहमत थे। वे कहते थे : साम्यवादी चाहते हैं, कि दुक्ख को मान्यता

दें और व्यक्तिगत सम्पत्ति को शक्ति से नष्ट करें। जिसका मतलब है, हिंसात्मक उपायों से मिटायें। किन्तु बुद्ध का तरीका है मनाने का, नैतिक शिक्षा का, प्रेम का। डॉ. आम्बेडकर के अनुसार यहीं पर बुद्ध और कार्ल मार्क्स में बुनियादी मतभेद है। यह मानी हुई बात है, कि साम्यवादियों को शीघ्र परिणाम प्राप्त होते हैं परन्तु उन्होंने घोषित किया, कि उनको इस बात में कतई संदेह नहीं, कि बुद्ध का ही मार्ग अचूक है। इसलिये वे मार्क्सवादी नहीं बने वे बौद्ध बने।

अब हमने डॉ. आम्बेडकर ने बौद्ध धम्म का स्वीकार क्यों किया ? इस पहले मुख्य प्रश्न का पूरा उत्तर दे दिया है। हमने देखा कि उन्होंने हिंदुधर्म का त्याग क्यों किया, उन्होंने दूसरे किसी धर्म को न अपनाकर बौद्ध धम्म ही क्यो चुना, वे विना किसी धर्म के केवल वैसे ही क्यों नहीं रहें और वे मार्क्स के अनुयायी क्यों नहीं बनें।

(२) बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के आन्दोलन का, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया, क्या महत्व है ?

सचमुच इस आन्दोलन का बहुत बडा महत्व है। सच तो यह है, कि यह कितना बढा है, यह समझ लेने की हमने शायद ही कुछ चेष्टा की है। डॉ. आम्बेडकर स्वयं एक महापुरुष थे और महापुरुष पर्वत जैसे होते हैं। वे कितने बडे होते हैं, यह हम दूर से ही जान पाते हैं याने कि उनकी मृत्यू के काफी समय पश्चात्। यही हाल डॉ. आम्बेडकर के सम्बंध में है। उनकी वास्तविक उपलब्धि कितनी महान थी, इसे समझने का प्रारम्भ हम अभी कर रहे हैं। जो हाल महापुरुषों को जानने के संबन्ध में है, वही हाल उनके द्वारा चालू किये गये आन्दोलनों या कार्यों को जानने सम्बन्ध में भी है। ये आन्दोलन पर्वत के तल से निकलनेवाली उस नदी के समान होते है, जो पहले बहुतही छोटी होती है- केवळ एक छोटा सा झरना। काफी समय बाद जब कि वह मीलों की दूरी तय कर लेती है, वह बडी नदी बन जाती है। अर्थात जब अनेक वर्षों का समय व्यतीत हो जाता है। यही हाल बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के आन्दोलन का है, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया था।

केवल अभी हम यह समझने की शुरुआत कर रहे हैं, कि उस आन्दोलन में सचमुच कितना बडा अर्थ है । केवल अभी हम यह अनुभव करना प्रारम्भ कर रहे हैं, कि उसका महत्व कितना बडा है । आज मैं डॉ आम्बेडकर द्वारा उद्घाटित बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के महान आन्दोलन के अर्थ को चार शीर्षकों में बतलाऊंगा :

(अ) डॉ. आम्बेडकर के अनुयायियों के लिये उसका महत्व अर्थात् उनके लिये जिन्होंने नागपूर में तथा उसके कुछही दिनों पश्चात् धम्मदीक्षा ली ।

(आ) भारत के लिये उसका महत्व । अर्थात् भारत की अ-बौद्ध जनता विशेषकर हिंदुओं के लिये, उसका महत्व ।

(इ) स्वयं बौद्ध धम्म के लिये उसका महत्व ।

(ई) विश्व के लिये उसका महत्व ।

(अ) डॉ. आम्बेडकर के अनुयायियों के लिये डॉ. आम्बेडकर द्वारा उद्घाटित बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार आन्दोलन का महत्व । अर्थात् उनके लिये जिन्होंने नागपूर में १४-१०-१९५६ को तथा उसके कुछ ही दिनों पश्चात् धम्मदीक्षा ली ।

इसे समझना बहुत कठिन नहीं है । सन १९५७ और ६७ के बीच, मैंने स्वयं महाराष्ट्र की कई बार यात्रा की । मैं अनेक लोगों से मिला, और मैंने कई भाषण दिये । जब भी मैं लोगों से मिलता था, पूछता था, ' आपने धम्मदीक्षा ली हैं कहिए अब कैसा अनुभव कर रहे हो ? अब आप एक बौद्ध है बताइए इस स्थिति में आपको कैसा लगता है ? अपने में कौन सा फर्क नजर आता है ? '' यह मैं सब से पूछा करता था चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित, वृद्ध हो या युवा, शहर में रहनेवाला हो या गाँव में । मुझे प्रायः हर समय एक जैसा ही उत्तर मिलता था । लोग कहते थे, '' अब जबकि हम बौद्ध हैं, हम स्वतंत्रताका अनुभव कर रहे हैं-जाति की गुलामी से स्वतंत्रता का, अस्पृश्यता के नरक से मुक्त होने का-अनुभव कर रहे हैं । अब हम मनुष्य

हैं, स्वतंत्र मनुष्य हैं । आगे बढने के लिये स्वतंत्र, विकसित होने के लिये स्वतंत्र । इसका हम अनुभव कर रहे हैं । '' यही उस सामुदायिक धम्म स्वीकार का, जिसका प्रारम्भ डॉ. आम्बेडकर ने किया था, उनके अनुयायियों के लिये बडा महत्व है । उनके लिये इसका अर्थ एक नई जिन्दगी है । इसका मतलब है, कि उनका पुनर्जन्म हुआ है । इसपर बहुत अधिक कहने की मुझे कोई जरूरत नहीं । क्यों कि यह आप सब लोगों का, जो अपने को बौद्ध कहते हैं, अनुभव होना चाहिये । और यदि आपका यह अनुभव नहीं है, तो आपको स्वयं से पूछना चाहिये, कि क्या हमने सचमुच धम्म-दीक्षा ली है ? क्या हम सचमुच धम्म का पालन कर रहे हैं ?

(आ) भारत के लिये डॉ. आम्बेडकर द्वारा उद्घाटित बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के आन्दोलन का महत्व : अर्थात भारत की अ- बौद्ध जनता, विशेषकर हिंदुओं के लिये, उसका महत्व ।

भारत में बहुसंख्यक लोग हिंदू है । बौद्ध तुलनात्मक दृष्टि से अल्पसंख्यक हैं । तथापि डॉ. आम्बेडकर द्वारा उद्घाटित सामुहिक धम्म-परिवर्तन के आन्दोलन का हिंदू जाति पर गम्भीर प्रभाव पडा है । उसने हिंदुओं को एक बहुत बडा धक्का दिया है, और उनमें से कुछ लोगों को बहुत गम्भीरता से सोचने के लिये मजबूर किया है । इतना ही नहीं, बौद्ध धम्म में दीक्षित होने के पश्चात इन नव दीक्षित बौद्धों ने अपने को अस्पृश्य समझे जाने का धिक्कार कर दिया । उन्होंने मनुष्य जैसा व्यवहार किये जानेपर बल दिया । हिंदुओं को लाचार होकर कुछ हद तक ही सही उनके प्रति अपना रवैय्या बदलना पडा । कुछ हिंदू अब यह मानने लगे हैं कि जाति व्यवस्था एक अभिशाप है । अस्पृश्यता एक अभिशाप है । तथापि वे हिंदू बने रहना और शास्त्रों में अपना विश्वास कायम रखना चाहते हैं । इसने उन्हे बहुत विपरित परिस्थिती में डाल दिया है । क्यों कि कुछ हिंदुशास्त्र जाति-व्यवस्था के पक्षपाती हैं और खासकर अस्पृश्यता के । तात्विक दृष्टि से यदि देखा जाय, तो ऐसे उदारमना हिंदुओं को चाहिये, कि वे उन शास्त्रों की अवहेलना करें तथा बौद्ध धम्म की दिशा

में अग्रसर हों। अब उन में से कुछ लोग धम्म को आचार में भी ला रहे हैं। सामुदायिक बौद्ध धम्म परिवर्तन का आंदोलन संपूर्ण भारत के लिये इस प्रकार महत्व रखता है। हिंदू जाति को प्रभावित करने के कारण सत्य ही हिंदुओं के लिये महत्वपूर्ण है। यह संपूर्ण भारतीय समाज को अधिक मानवीय और वास्तविक रूप में अधिक धर्मनिरपेक्ष बनाने में सहायक है।

(इ) स्वयं बौद्ध धम्म के लिये डॉ. आंबेडकर द्वारा उद्घाटित बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के आन्दोलन का महत्वः

ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो बौद्ध धम्म बहुत प्राचीन धर्म है और अपने दो हजार पाँच सौ वर्षों की अवधि में वह अनेक उतार- चढावों में से गुजरा है। कभी वह उन्नति के शिखर पर रहा है और कभी अवनति की गहरी खाँई में। वस्तुतः धम्म ' अकालिको ' अर्थात् काल-बन्धन से मुक्त होने से अवनत नहीं हुआ। किंतु बौद्ध धर्म का समाजाष्ठित-धार्मिक स्वरूप समय समय पर अवश्य पतन को प्राप्त हुआ। छः या सात सौं वर्ष पूर्व, बौद्ध धर्म भारत से प्रायः लुप्त हो गया था और यह उसके स्वयं के लिये ही केवल एक जबरदस्त धक्का नहीं था, वरन उसके देशके लिये भी था जहाँ उसका जन्म हुआ। वह मध्य एशिया से भी लुप्तसा हो गया और साथ ही जावा तथा सुमात्रा से भी। अभी हाल में ही वह अनेक देशों से एक तो लुप्तप्रायसा हो गया है, या तो बहुत ही कमजोर हो गया है। प्रमुखतः साम्यवाद के फैलने से बौद्ध धर्म मंगोलिया से लुप्त हुआ और तिब्बत, वियतनाम, कम्बोडिया और लाओस में कमजोर हो गया। वास्तव में, हमें यह स्वीकार करना होगा, कि बुद्ध धर्म कुछ सौ वर्षों से अवनति की ओर गतिमान रहा है। परंतु वर्तमान शताब्दि में तो यह गति अधिक तीव्र सी हो गई थी।

फिलहाल दुनिया के दो भागों में बौद्ध धर्म सचमुच ही उन्नति के पथ पर है। ये हैं, पश्चिम मे विशेषकर इंग्लैंड और भारत में विशेषकर महाराष्ट्र। स्वाभाविक ही है, कि महाराष्ट्र की प्रगति इंग्लैंड की प्रगति से काफी ज्यादा है। यह स्तुत्य है, कि यहाँ महाराष्ट्र में सामुदायिक धम्म परिवर्तन के आंदोलन के कारण, जिसका उद्घाटन डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने किया, इन कुछ

वर्षों में लाखों व्यक्ति बौद्ध बन चुके हैं। इस तथ्य का केवल भारत के लिये ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण बौद्ध जगत के लिये महत्व है। इस तथ्य का अर्थ केवल इतना ही नहीं है, कि बौद्ध धम्म का भारत में छः या सात सौ वर्षोंके पश्चात् पुनर्जागरन हुआ है। सच्चा अर्थ इससे अधिक व्यापक है। इसका ठीक अर्थ यह है, कि अब बौद्ध धम्म अवनति की दिशा में और अधिक नहीं बढ रहा है। अवनति की प्रक्रिया अब रुक गई है, पलट गई है। अब बौद्ध धम्म विकास की ओर पुनः उन्मुख हो गया है। इसलिये बौद्ध धम्म में सामुदायिक परिवर्तन के आंदोलन का, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया, केवल बौद्धधम्म के लिये ही महत्व नहीं है, अपितु समस्त बौद्ध जगत् के लिये भी उसका महत्व है। सच देखा जाय तो समस्त बौद्ध जगत् के लिये यह एक आशा का संदेश है। यह बतलाता है, कि बौद्ध धर्म कभी लुप्त हो भी जाय और लुप्त हो कर सैंकडों वर्षों के पश्चात् भी वह फिर जीवित हो सकता है। यह भारत में पुनरुज्जीवित हो सकता है, वस्तुतः वहाँ वहाँ हो सकता है जहाँ जहाँ वह मिट गया था या मिटाया दिया था। यद्यपि वह कुछ दुसरे रुप में जीवित हो उठेगा। फिर भी वह वही धम्म होगा। डॉ. आम्बेडकर के सामुहिक धम्म परिवर्तन के आंदोलन का इस लिये सम्पूर्ण बौद्ध धम्म के इतिहास में एक विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक महान् युग प्रवर्तक घडी है। ऐसी घडी-जहाँ से बौद्ध धम्म पुनः विकास की दिशा की ओर उन्मुख हुआ, जहाँ से उसने अपने ऐतिहासिक अस्तित्व में एक नये रुप को धारण किया- ऐसा रुप जो अतीत के किसी भी रुप से अधिक गौरवमय हो सकता है।

(इ) विश्व के लिये डॉ. आम्बेडकर द्वारा उद्घाटित बौद्ध धम्म के सामुहिक स्वीकार के आन्दोलन का महत्व :

सामुहिक रिति से बौद्ध धम्म को स्वीकृती का आंदोलन, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकरने किया था, संकीर्ण अर्थ में केवल धर्म परिवर्तन का आंदोलन नहीं था। याने कि, एक धर्म को छोड कर दूसरे धर्म में विश्वास रखने तक ही सीमित नहीं था। इसके विपरीत वह जीवन के सभी पहलूओं में, चाहे वे

धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, वैचारिक, सामाजिक, राजनैतिक या आर्थिक हो, आमूल परिवर्तन का प्रतिनिधी था। दूसरे शब्दों में, उसने केवल व्यक्ति में बदल लाया ऐसा नहीं, समूचे समाज में उसने बदल लाया। और भी, सामुहिक धम्म परिवर्तन का आंदोलन, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया था, आमूल परिवर्तन का प्रतिनिधीत्व करने के अतिरिक्त हितकारक परिवर्तन का भी प्रतिनिधी था। वह सर्वव्यापी प्रगति का- सर्वव्यापी विकास का-प्रतिनिधी था। इस लिये इसे हम केवल डॉ. आम्बेडकर का बौद्ध धम्म के स्वीकार का आंदोलन नहीं कहते, किंतु इसे हम डॉ. आम्बेडकर को धम्मक्रान्ति कहते हैं।

आज संसार के अनेक भागों में लोग अपने जीवन के सभी अंगों में अधिक हितकारक परिवर्तन चाहते हैं किन्तु उस ओर बढने के लिये उन्हे ठीक रास्ते का पता नहीं है। कुछ लोग हिंसा के जरिये परिवर्तन लाना चाहते हैं, कुछ धन-सम्पति द्वारा या विज्ञान और तकनीक द्वारा और या फिर शिक्षा द्वारा परिवर्तन लाना चाहते हैं। किंतु उन्हे ठीक सफलता नहीं मिलती है। कभी कभी तो उन्हे सफलता मिलती ही नहीं, और वे हालत की बेहालत कर डालते हैं। डॉ. आंबेडकर का सामुहिक बौद्ध धम्म स्वीकार का आंदोलन संसार के सामने एक ऐसी क्रान्ति का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो क्रांन्ति वास्तव में सफल हुई है। यह आंदोलन एक धम्मक्रान्ति का उदाहरण है-ऐसे क्रान्ति का जो शांतिपूर्ण तरीके से की गई है। अब जब मैं कहता हूँ, कि धम्मक्रान्ति सफल हुई है, तब मेरा मतलब यह नहीं कि वह पूर्ण रूप से सफल हुई है। स्पष्ट है, कि वास्तविकता कुछ और है। मेरा मतलब यह है, की बहुत प्रमाणमें वह सफल हुई है। अर्थात् बहुत प्रमाण में, लाखों लोगों के जीवन को शांतिपूर्ण तरीके से धम्म के द्वारा पूरी तरह बदल देने में, वह सफल रही है। इस प्रकार सामुदायिक धम्मपरिवर्तन का आंदोलन, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया था, समस्त विश्व के लिये बहुत ही बडा महत्व रखता है। वह सारे विश्व को सही दिशा दिखलाता है।

अब हमने दुसरा मुख्य प्रश्न सुलझा लिया : बौद्ध धम्म के सामुदायिक स्वीकार के आन्दोलन का, जिसका उद्घाटन डॉ आम्बेडकर ने किया, क्या

महत्व है-उस आंदोलन का डॉ. आम्बेडकर के अनुयायियों के लिये, भारत के लिये, बौद्ध धम्म के लिये, तथा समस्त संसार के लिये क्या महत्व है- यह हमने देखा।

(३) उस आंदोलन के सामने आज जो समस्यायें हैं, उनका मूल कारण क्या है ?

ये समस्यायें कई प्रकार की है : जैसे एकीकरण न होने की, उस्ताह नहीं होने की, आंशिक असफलता की आदि। किंतु इन सभी के मूल में तीन कारण है :

(अ) डॉ. आम्बेड़कर ने बौद्ध धम्म ही क्यों चुना इस बात को ठीक से समझ सकने का अभाव।

(ब) सामुदाहिक धम्म परिवर्तन के आंदोलन के महत्व को समझ सकने में असफलता। और,

(क) कार्य के लिये उचित मार्ग को ढुंढ सकने में असफलता।

(अ) डॉ आम्बेडकरने बौद्ध धम्म ही क्यों चुना इस बात को ठीक से समझ सकने का अभाव :

यदि हम इस बात को साफ-साफ नहीं समझ लेते, कि डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धम्म क्यों चुना (अर्थात् उन्होंने हिंदूधर्म का त्याग क्यों किया, उन्होंने अन्य धर्मों को छोड कर बौद्ध धम्म ही क्यों चुना, क्यों वे बिना किसी धर्म का अंगीकार किये वैसे ही नहीं रहें और क्यों वे मार्क्सवादी नहीं बने) तब तक सम्भवतः हम यह समझ नहीं पायेंगे कि हम लोगों ने बौद्ध धम्म का चयन क्यों किया है, और यदि हमने अभी तक उसे ग्रहण नहीं किया हो तो अब क्यों करना चाहिये। इसके विपरित हमारे सामने केवल एक साधारणसा अस्पष्ट विचार हो सकता है, कि बौद्ध धम्म एक अच्छी शिक्षा है और इस लिये बौद्ध धम्म में परिवर्तन एक अच्छी बात हो सकती है।

(ब) सामुदाहिक धम्म परिवर्तन के आंदोलन के महत्त्व को समझ सकने में असफलता ।

यद्यपि, हम अपने लिये एक मर्यादित अर्थ में, बौद्ध धम्म में सामुदाहिक परिवर्तन के आंदोलन के महत्व को भले ही समझ जाये और भारत के लिये भी उसके महत्व को जान लें, किंतु स्वयं बौद्ध धम्म के लिये या समस्त विश्व के लिये उसके महत्व को सम्भवतः हम नहीं जानते । दूसरे शब्दों में, इस आंदोलन को हम जितनी चाहिये उतनी विशाल दृष्टी से नही देख पाते । इस कारण हम प्रेरित नहीं होते अर्थात अपने दायरे से ऊपर उठकर किसी महान कार्य में अपने को लगा देने की भावना से नहीं भरते, इसलिये धम्म क्रांति के कार्य को करने के बारे में विचार नहीं करते । उलटे हम एक बहुत ही संकीर्ण विचार से व्यक्तिगत मामलों ही में उलझे रहते हैं, ज्यादा से ज्यादा यदि हुआ तो अपने मोहल्ले या अपने शहर के सम्बध में ही सोचते हैं । बस्स इतना ही ।

(क) कार्य के लिये उचित मार्ग को ढूंढ सकने में असफलता ।

हम अभी तक कार्य करने के लिये उचित मार्ग नही ढूँढ सके हैं । इसका मतलब होता है, कि हम अब तक कार्य करने का कोई नया रास्ता नहीं ढूँढ सके हैं । हम अभी भी लकीर के फकीर बने रहे हैं । डॉ. आम्बेडकर द्वारा लाया गया परिवर्तन एक धम्म-परिवर्तन था, एक धम्मक्रान्ति थी और हम धम्म के कार्य तभी कर सकते हैं, जब हम धम्म के अनुरूप साधनों को अपनाते हैं । यहाँ सांसारिक अनुभव- राजनैतिक अनुभव- किसी काम के नहीं हैं । धम्मक्रान्ति के लिये हम तभी कार्य कर सकते हैं जब हम धम्म को समझें, धम्म का आचरण करें, उस क्रान्ति के हम स्वयं पुर्जे बनें और उसे अपने जीवन में ढाल लें । दूसरे शब्दों में, हम धम्मक्रान्ति के लिये तभी कार्य कर सकते हैं, जब धम्मपरिवर्तन के पश्चात् हमने स्वयं अपने को बदल डाला हों. हम उसके लिये तभी कार्य कर सकते हैं जब हम में, आमूल परिवर्तन हो जाय । हमारे जीवन के सभी पहलू क्रान्तिमय हो जायँ । तभी जब हम अपने

ही ' पुनर्जन्म ' का अनुभव करें और एक नई जिन्दगी जीयें । केवल त्रिशरण और पंचशील दुहरा देना और अपने को डॉ. आम्बेडकर का सच्चा अनुयायी बतलाना पर्याप्त नहीं है । दूसरे शब्दों में, धम्मक्रान्ति के लिये हमें न केवल एक नये मार्ग की तलाश ही करनी है, वरन् हमें नये प्रकार के बौद्ध कार्यकर्ता भी ढूँढने हैं । डॉ. आम्बेडकर ने इस बात को भली-भाँति समझ लिया था और इसी कारण उन्होंने कहा था, कि वर्तमान परिस्थितियों में जो भिक्षुसंघ है वह बौद्ध धम्म के प्रचार के लिये अयोग्य है । डॉ. आम्बेडकर ने जो कहा उसका मतलब है, कि हमें एक नये प्रकार के भिक्षु की आवश्यकता है ।

यह कोई जरूरी नहीं है, कि इस नये प्रकारके बौद्ध प्रचारक को भिक्षु ही कहा जाये । वह कुछ भी कहलाया जा सकता है । वह चाहे जो भी कहलाया जाये, उसे सौं प्रतिशत बौद्ध होना चाहिये पचहत्तर फी सदी बौद्ध और पच्चीस फी सदी हिंदू नहीं । या निन्नानबे फी सदी बौद्ध और एक फी सदी हिंदू भी नहीं । इसका अर्थ है, कि उसे एक बौद्ध के समान सोचना चाहिये, बौद्ध के समान बोलना चाहिये, बौद्ध के समान रहना चाहिये । मेरे कहने का मतलब यह नहीं हैं, कि उसे किसी विशेष प्रकार की वेशभूषा करनी चाहिए किंतु उसे सचमुच में ऐसा मनुष्य दिखना चाहिये जिसका पुनर्जन्म हुआ प्रतीत हो । उसे ऐसा मनुष्य दृष्टिगोचर होना चाहिये जो एक नई जिन्दगी जी रहा हो । यदि आपको कोई दस लाख रुपये दे दे तो आप जो नजर आते हैं, उससे बहुत ही भिन्न दिखलाई देंगे । आप दूसरी तरह दिखलाई देंगे । क्योंकि आप एक नयी संवेदना का अनुभव कर रहे होंगे । हमारे नये प्रकार के बौद्ध प्रचारक के सम्बन्ध में भी वैसा ही होगा । दस लाख रुपयों से अधिक मूल्यवान चीजें उसको दे दी गयी हैं । इस कारण वह उस बुद्ध, धम्म और संघ के तीन रत्नों से युक्त होने के कारण, उसे बिल्कुल दूसरा ही दिखलाई देना चाहिये । उसे एक बौद्ध जैसे दिखना चाहिये । इसके अतिरिक्त इस नये प्रकार के बौद्ध प्रचारक को चाहिये, कि वह स्वयं को इन तीन रत्नों को समर्पित कर दे । ये तीन रत्न उसके जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण हो - उसके धंदे से भी अधिक, पत्नी और परिवार से भी अधिक, सांसारिक सफलताओं से भी अधिक, सुख-सुविधाओं से भी अधिक-अपितु अपने जीवन से भी अधिक महत्व के

हो । अतः जहाँ तक हो सके यह नये प्रकार का बौद्ध प्रचारक पूरे समय का कार्यकर्ता हो । धम्मक्रान्ति के लिये वह अपना सारा समय और शक्ति लगा दे । यह नये प्रकार का बौद्ध धम्म प्रचारक धम्म का भली प्रकार ज्ञाता हो और धम्म का आचरण करनेवाला हो । वह शीलों का पालन करे, विशेषकर दस शीलों का, दस कुशल धर्मों का और ध्यान भावना का अभ्यास करे । आवश्यकता पडने पर वह अपने दोनों हाथों से कठिन परिश्रम करे । वह मात्र एक ' नेता ', जो सिर्फ दूसरों ने क्या करना चाहिये यह बतलानेवाला होता है, नहीं होगा । उसे स्वयं को एक उदाहरण प्रस्तुत करना होगा । और सबसे बडी बात यह है, कि इस नये प्रकार के बौद्ध कार्यकर्ता को धम्मक्रांन्ति के लिये धम्म के अनुरूप ही कार्य करना होगा । वह मैत्री, करुणा और प्रज्ञा के रास्ते इस धम्मक्रान्ति के लिये कार्य करेगा । इसके अलावा यह नये प्रकार का बौद्ध कार्यकर्ता- ये नये प्रकार के बौद्धधम्म कार्यकर्ता, साथ में सहयोग से कार्य करेंगे और कार्यकर्ता गण या दलही संघ बनेगा । वस्तुतः वह एक महासंघ या महान आध्यात्मिक समाज बनकर जो केवल भारत में ही नहीं, वरन् अनेक देशों में- पूरे विश्व में कार्य करेगा । वह सभी प्राणियों के सुख और सुविधा के लिये कार्य करेगा । यदि हम इस प्रकार का महासंघ बनाते हैं तो हमारे वे सारे प्रश्न जो सामुदायिक धम्म, परिवर्तन के आंदोलन के, जिसका उद्घाटन डॉ. आम्बेडकर ने किया था- सामने हैं, अंततः हल हो जायेंगे । क्योंकि हम तब धम्मक्रांन्ति के लिये कार्य करने हेतु एक नया मार्ग पा गये होंगे- साथ-साथ कार्य करने का एक नया मार्ग ।

आप लोग यह सुनकर खुश होंगे, कि हमने इंग्लैंड में इस प्रकार का महासंघ बना लिया है । इसे मैंने १९६७ में प्रारम्भ किया और इसीलिये बौद्धधम्म इंग्लैंड में प्रगति कर रहा है । इंग्लैंड में यह महासंघ पश्चिमी बौद्धसंघ के नाम से जाना जाता है । तथापि भारत में इसका नाम ' त्रैलोक्य बौद्ध महासंघ ' है । फिलहाल इस के सदस्य विश्व में भारत को लेकर आठ विभिन्न देशों में केन्द्र चला रहें हैं और नियमित रूपसे कार्यरत हैं । इस संघ में सौ फी सदी बौद्ध हैं, याने वे व्यक्ति जो बुद्ध, धम्म और संघ को समर्पित हैं और जो दस शीलों का या दस कुशल धर्मोंका पालन करते हैं ।

इस विषयपर मैं और भी बहुत कुछ बोलना चाहूंगा और शायद आप भी बहुत सारा सुनना चाहेंगे । किंतु अफसोस है, कि आज उसके लिये पर्याप्त समय नहीं है । आपके सामने बोलने का और अपने कुछ विचार रखने का सुअवसर पाकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ । मैं आशा करता हूँ, कि यह विचार कि क्यों डॉ. आम्बेडकर ने सामुदायिक धम्म परिवर्तन के महान आंदोलन का उद्घाटन किया, स्पष्टतर हो गया होगा । और स्पष्ट हुई होगी इस आंदोलन के भारी महत्त्व की जानकारी और उस आंदोलन के सामने आ पडी अनेक समस्याओं के मूल कारण । मैं समझता हूँ, कि अभी आप स्वयं यह देख पा रहे होंगे, कि ' बौद्ध धम्म ही एक मात्र उपाय है, हिंदू धर्म पर ! एक मात्र उपाय है दुःख पर, एक मात्र उपाय है शोषणपर- केवल भारत के लिये ही नहीं अपितु सारे विश्व के लिये ! मैं आशा करता हूँ, कि डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर द्वारा प्रारम्भ की गई इस धम्मक्रांन्ति का प्रसार कार्य जारी रहेगा और यह कि त्रैलोक्य बौद्ध महासंघ की प्रगति होती रहेगी और मास मूव्हमेन्ट ॲण्ड बुद्धिस्ट ब्रदरहुड का कार्य सफलतासे चालू रहेगा । आइये, हम सब धम्म की कुशलता के लिये, बौद्ध धर्म के हित के लिये मिलकर काम करें ।

*

लेखक का अल्पपरिचय

पूज्य भन्ते महास्थविर संघरक्षितजी मूल इंग्लैंड निवासी है । डेनिस लिंगवुड उनका नाम था ।

बचपनमें जब बिमार थे तब बौद्ध ग्रंथोंके माध्यमसे धम्म के सन्निध आए । दूसरे महायुद्ध के कालमें जबरदस्तीसे सेनामें भरती करने के बाद वे भारत आए । भारत भूमिपर पैर रखतेही उनके कदम धम्मकी खोज करनेमें लगे । लेकिन उन्हे निराश होना पडा । तब उन्होंने अपना तबादला सिलोन करवा लिया ।

महायुद्ध समाप्त होने के बाद भन्तेजीने भारतमें ही रहने का निश्चय किया । जुलाई - १९५० में उन्होंने पूज्य उ. चंद्रमणीजीके हाथों दिक्षा ली । तपश्चात उन्होंने अपना समय धम्मप्रचार और अध्ययनमें बिताया । उनका 'सर्वे आफ बुद्धिजज्म' ग्रंथ संसारभरमें जानामाना है ।

भारतमें धम्मकार्य करते समय भन्ते संघरक्षितजी और पू. डॉ. बाबासाहब आंबेडकरजी इनकी तीन बार भेंट और बहस हुअी डॉ. बाबासाहब भन्तेजी को एक आदर्श भिक्षू मानते थे ।

१९६४ में भन्तेजी इंग्लैंड गए । वहाँ उन्होंने त्रैलोक्य बौद्ध महासंघ सहाय्यक गण (जिसे पाश्चिमात्य राष्ट्रोंमें फ्रेंडस् आफ दि वेस्टर्न बुद्धिस्ट ऑर्डरके नामसे जाना जाता है ।) की स्थापना की । महासंघ के सदस्य धम्म और संघको अपना अंतिम आदर्श मानकर अपना धम्मजीवन बिताते है ।

धर्म और धर्म-निरपेक्ष राज्य

धर्म और धर्म-निरपेक्ष राज्य

DHAMMA AND THE SECULAR STATE

महास्थविर संघरक्षित

अनुवादक :
अनंत हूमने

हृद्‌गत

वर्तमान समाज में से भ्रष्टाचार तथा बुराइयों को मिटाने के उद्देश्य में जन-जागृति-अभियान का आयोजन विश्व हिंदू परिषद ने दिनांक २३-१-८२ को औरंगाबाद में किया था। इस अवसर पर परिषद ने आदरणीय महास्थविर संघरक्षित जी का व्याख्यान आयोजित किया था।

जिन्होंने विश्व के सभी धर्मों का गहरा अध्ययन किया है, जिन्होंने धर्म-रहस्यों की तथ्यता-अतथ्यता का परख कर सार असार जाना है, जो मानवता धर्म प्रचार के अधिवक्ता हैं, और जो धर्म-निरपेक्ष भारत के हितैषी हैं ऐसे विश्वविख्यात संघरक्षित जी का भाषण केवल धारावाही और अकाट्य तर्क से सुसज्जित ही नहीं वरन् कल्याणमित्रता से लबालब भरा होने से सीधा, सरल और सुस्पष्ट भी है।

भारतीय समाज के जिस महान् वृक्ष को अंधश्रद्धाओं ने अमृतसिंचाई से वंचित कर दिया, परंपरागत मिथ्याचरों ने खोखला बना दिया और जाति-पाँति की लताओं ने शताब्दियों से ढाँक कर रखा उस वृक्ष को पल्लवित करने का काम महास्थविर ही कर सकते हैं।

डॉ. आम्बेडकर ने ठीक ही कहा है - धम्म कुछ भी नहीं यदि वह अनुशासन का सर्वोत्कृष्ट साधन न हो। इस सही अर्थ से बौद्ध धम्म धर्म (Religion) नहीं है, वह बुद्ध ने बतलाई एक ऐसी जीवन-पद्धति है जिसमें धर्म के नाम पर भी क्यों न हो गुटबंदी की कोई गुंजाइश नहीं रहती। इस आशय से बौद्ध धम्म और धर्म-निरपेक्षता पर्यायवाची हैं।

दूसरे शब्दों में केवल बौद्ध धम्म ही सही अर्थ में धर्म-निरपेक्ष राज्य को बलशाली बनाने में सहायक है। ऐसेही जिस जिस राज्य को धर्मनिरपेक्ष बनना है उस उस राज्य को बिना बुद्धके रास्ते गति नहीं है। धर्म-निरपेक्षता का प्रचार धम्म का प्रचार है और धम्म का प्रचार धर्मनिरपेक्षता का प्रचार है। बुद्ध और

धम्म के सेवक ही धर्म- निरपेक्षता का प्रभावी प्रचार करने में समर्थ होते हैं।

व्याख्यान अंग्रेजी में दिया गया था। उसे अक्तूबर १९८२ में बुद्धयान में से मराठी में, जनवरी १९८३ में Religion and Secularism नाम से अंग्रेजी में और अब यह हिंदी में प्रकाशित किया जा रहा है। साथ ही साथ तामिल में भी छप रहा है।

आशा है धर्म के नाम पर होनेवाले अहितों से दूर होकर समाज धर्मनिरपेक्षता की राह पर उचित कदम बढायेगा।

- लोकमित्र
संपादक

धर्म और धर्म-निरपेक्ष राज्य

भाइयों और बहनों,

मुझे बहुत प्रसन्नता होती है कि यहाँ पर इस संध्या समय मैं विश्व-हिंदू-परिषद के, जिसकी स्थानीय शाखा ने यह कार्यक्रम आयोजित किया है, सदस्यों तथा मित्रों को सम्बोधित करने के लिये उपस्थित हूँ। यहाँ विश्व हिंदू-परिषद है ऐसा मुझे कुछ समय पूर्व तक सुनने को नहीं मिला था किन्तु मुझे ऐसा बतलाया गया है कि भारत में लगभग बीस वर्ष पहले स्थापित हुआ यह एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है, जिसका पूरे विश्व में करीब बीस विभिन्न देशों में कारोबार फैला है और इसके तीन मुख्य उद्देश्य है। ये उद्देश्य हैं : (१) सभी हिंदुओं को चाहे वे किसी भी सम्प्रदाय के हों संगठित करना, (२) वर्तमान हिंदू समाज में प्रतिष्ठित भ्रष्टाचार तथा बुराइयों को मिटाना और (३) समाज के गरीब तथा दलित वर्गों की सेवा करना। निस्संदेह ये सभी उद्देश्य बहुत प्रशंसनीय हैं- बहुत ऊँचे हैं, इस का कोई इनकार नहीं किया जा सकता। हरएक को इनका स्वागत ही करना चाहिये। उनको कार्यान्वित करने में परिषद को खासी अच्छी सफलता प्राप्त हुई है ऐसा मैं समझता हूँ और इसके लिए वह धन्यवाद की पात्र है।

मेरे प्रारम्भिक कथन से आपको यह मालूम हो गया होगा कि मैंने भारत में बीस साल व्यतीत किये है। केवल सिलोन, सिंगापूर और नेपाल की यात्राओं को छोडकर १९४४ से लेकर १९६४ तक मैं यहाँ रहा हूँ। इस अवधि में बहुत से हिंदू मेरे मित्र बने और मेरी पहचान विभिन्न मतों और अध्यात्मिक परम्पराओं को माननेवाले अनेक हिंदूओं से हुई। इस से भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सुप्रसिद्ध हिंदू आचार्यो तथा संप्रदायों के गुरुओं से जैसे : आनन्दमयी माँ, कन्हनगढ के स्वामी रामदास और रमण महर्षि आदि से मिलने का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ और उनके साथ मैंने कई सप्ताह व्यतीत किये।

(६)

और भी अन्य अवसरों पर मुझे श्रृंगेरी मठ के शंकराचार्य तथा पुरी के शंकराचार्यजी से मिलने का मौका मिला। इन सभी बडे बडे व्यक्तिओं के साथ मैं ने धार्मिक चर्चा की है।

जब मैं भारत में था तब अनेक हिंदुओं से मिलना शायद स्वाभाविक ही था। परंतु साथ ही साथ बहुत से दूसरे धर्म के लोगों के सम्बन्ध में भी मुझे जानकारी प्राप्त हुई। सचमुच मेरी मित्रता बहुत से विभिन्न धर्मावलम्बियों से हुई; और ऐसा ही होना चाहिये यह सोचकर मुझे बहुत आनंद हुआ। उदाहरणार्थ, मेरे बहुत से मित्र सिक्ख थे। आप जानते ही हैं कि सिक्ख लोग गुरु नानक तथा अन्य गुरुओं के अनुयायी हैं। सिक्ख अच्छी तरह जाने जाते हैं, चूंकि वे पगडी पहनते हैं और दाढी रखते हैं, तथा कभी कभी हाथ में किरपाण रखते हैं। वे सरलता से लंदन तक पहचान में आ जाते हैं। विशेषकर बम्बई में मेरे बहुत से पारसी दोस्त भी थे। पारसी लोक प्रेषित झरथुष्ट्र के अनुयायी हैं और इसलिये अग्निपूजक हैं। फिर, मेरे जैन मित्र भी थे, सन्यासी और गृहस्थ, दोनों! आपको विदित होगा कि जैन लोग तीर्थंकरों के, विशेष कर अंतिम तीर्थंकर महावीर के अनुयायी हैं। उसी प्रकार मेरे बहुत से ईसाई मित्र भी थे, कैथोलिक और प्रोटेस्टैंट, दोनों-जो यद्यपि आपस में लड़ते होंगे, लेकिन मुझसे नही लड़े। मेरे कुछ यहूदी मित्र भी थे। उन यहूदी मित्रों में एक रब्बी याने यहूदी धर्म का धर्ममंत्री था। परंतु अपनी प्रार्थनाओं में जे. कृष्णमूर्ति के विचारों को सम्मिलित करने के कारण वह अपनी श्रोतृमंडली में बड़ी मुश्किल में पड़ गया था। इनके अतिरिक्त भी मेरे मित्र थे जो बहाई थे, या बहाई मत के अनुयायी थे। ये सारे मित्र, जो इतने सारे धर्मों के अनुयायी थे, मेरे लिये सभाओं तथा भाषणों का आयोजन करते थे। यह भी सत्य है कि मेरे भारत में बीस वर्षों के दौरान अनेक बौद्ध भी मित्र रहे। यद्यपि भारत में बौद्धों की संख्या बहुत ही कम थी। फिर भी देश के विभिन्न भागों में मेरे थोडे मित्र अवश्य थे।

यहाँ पर यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यह बात कैसे सम्भव हुई? इन विभिन्न धर्मों के अनुयायियों से मेरी मित्रता कैसे सम्भव हो सकी? पहली बात यह है कि यह इसलिये सम्भव हुआ क्योंकि वे सभी एक ही देश अर्थात्

भारत के निवासी थे। भारत में बहुत से धर्म हैं। हिंदू और बौद्ध के अतिरिक्त यहाँ जैन, पारसी, सिक्ख, इस्लाम, ईसाई धर्मों के साथ-साथ उनके अनेक पंथ, उन पंथों की शाखायें-उपशाखायें और उनकी भी सैकडों अलग-अलग परम्पराये हैं। इन सभी धर्मों का यहाँ अस्तित्व है। धर्मों की तादाद की दृष्टि से, फिर चाहे वे यहाँ जन्मे हो या बाहर से लाये गये हो, भारत वस्तुतः बहुत सम्पन्न है। ये सभी धर्म यहाँ शांतिपूर्वक रहते हैं। यह ठीक है कि कभी कभी गलतफहमी के कारण कुछ लड़ाई-झगडे भी हो जाते हैं। किन्तु साधारणतः यही कहा जायगा कि वे सभी आपस में शांति से रहने का उपाय ढूंढ ही लेते हैं। अतः यह सब कैसे हो पाता है ? इस एक देश, भारत में, इतने सारे धर्मों का साथ-साथ शांतिपूर्वक रहना कैसे सम्भव होता है ? यह इसलिए सम्भव होता है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है।

हाँ, तब धर्मनिरपेक्ष राज्य क्या है ? धर्मनिरपेक्ष राज्य वह है जहाँ कोई भी एक विशिष्ट धर्म दूसरों से अधिक अनुगृहित नहीं किया जाता है, अर्थात् शासन द्वारा अनुगृहित नही किया जाता है। धर्मनिरपेक्ष राज्य वह है जहाँ किसी भी धर्मके बारे में पक्षपात नहीं किया जाता है और जहाँ हर व्यक्ति अपने पसंद का धर्म मानने के लिये स्वतंत्र होता है। इतना ही नहीं, धर्मनिरपेक्ष देश में हर व्यक्ति को, यदि वह कानून और व्यवस्था तथा सामाजिक व्यवहार का पालन करता हो और अपने धर्म पालन तथा उसके प्रचार में वह दूसरों के अधिकारों पर अतिक्रमण नहीं करता हो तो, अपने धर्म का प्रचार करने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। यही हम धर्मनिरपेक्ष राज्य का मतलब समझते हैं।

मैं युनाइटेड किंग्डम् में, जहाँ पूर्ण रूप से धर्मनिरपेक्ष राज्य नहीं है, जन्मा और बड़ा हुआ। वहाँ का हाल यह है कि वहाँ के राजा को ईसाई होना ही चाहिये। उसे रोमन कैथोलिक नहीं वरन् प्रोटेस्टैंट और वह भी लगभग आठ सौं प्रोटेस्टैंट सम्प्रदायों में से केवल एक का ही होना चाहिए याने कि उसे चर्च-ऑफ-इंग्लैण्ड का होना चाहिये। यदि राजा (या रानी) धर्म परिवर्तन करते हैं तब वे गद्दी पर नहीं बैठ सकते। इंग्लैंड में चर्च-ऑफ-इंग्लैंण्ड को कई खास सहूलियते प्राप्त हैं। उदाहरणार्थ जेल में कैदियों को और अस्पताल

में रोगियों से मिलने न मिलने देने का अधिकार चर्च-ऑफ-इंग्लैंड के पुजारी का होता है। दूसरे धर्म के पुजारियों के लिये कभी कभी इन स्थानों में प्रवेश पाना मुश्किल हो जाता है। इस बारे में हमारी इंग्लैंड की अपनी संस्था फ्रेन्ड्स् ऑफ वेस्टर्न बुद्धिस्ट ऑर्डर ने कुछ कठिनाई अनुभव की है। इस लिये हम यह नहीं कह सकते कि युनाइटेड किंग्डम् पूर्णतः एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है।

उसी प्रकार सोवियत रूस भी धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं है, कम से कम उस अर्थ में जिसमें मैं उस शब्द का प्रयोग इस समय कर रहा हूँ। या यूं कहिये कि रूस में मार्क्सवाद-लेनिनवाद राजकीय धर्म है। दूसरे मत-वाद भी होंगे किंतु बहुतही मर्यादित अवस्था में। मिसाल की तौर पर धर्म का प्रचार करना मना है और धार्मिक पुस्तकें तथा पत्रिकायें, चाहे वे ईसाई हों या न हों, प्रकाशित नहीं की जाती हैं। रूस में मुद्रण और प्रकाशन पर सरकार का एकाधिकार है। केवल मार्क्सवादी साहित्य प्रकाशित करने की अनुमति है। यद्यपि रूस में अभी भी बहुत से ईसाई हैं, फिर भी बाइबिल की प्रति प्राप्त करना उनके लिये बहुत कठिन होता है। वस्तुतः वहाँ बाइबिल का काला बाजार होता है। रूस के बाहर के ईसाइयों को बाइबिल की तस्करी करनी पड़ती है। और यदि ऐसा करते हुये वे पकड़े जाते हैं तो जेल भी भेजे जा सकते हैं। अतः सोवियत रूस धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं है। वहाँ धार्मिक स्वतंत्रता नहीं है।

नेपाल, भारत के पडोस में है। वहाँ धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं वरन् हिंदू राज्य है। पर, मुझे नहीं मालूम आज वहाँ की परिस्थिति क्या है। जब में १९४९ और १९५२ को वहाँ गया था जातिव्यवस्था वहाँ पर केवल समाजद्वारा स्थापित ही नहीं थी, किंतु आमतौरपर कानूनन लागू थी। यदि आपने जाति प्रथा का पालन नहीं किया तो आप गिरफ्तार करके दंडित ही नहीं होते वरन् जेल भी भेजे जा सकते थे। इसके कई उदाहरण मुझे दृष्टिगत हुये। अकस्मात् कोई स्वजाति से वंचित हो जाता था। एक समय की बात है, जब मैं पल्या तानसेन नामक एक बौद्ध विहार में ठहरा हुआ था, किसीने काफी रात बीते द्वार खटखटाया। द्वार खोलने पर सामने एक हिंदू व्यक्ति के दर्शन हुये। उपरान्त इस प्रकार बातचीत हुई।

'' क्या मैं विहार में रातभर ठहर सकता हूँ ? ''

' आप क्यों ठहरना चाहते हैं ? ''

'' दुर्भाग्य से मैं जातिच्युत हो गया हूँ इस लिये घर नही जा सकता । मेरी पत्नी मुझे घर में नहीं आने देगी । क्योंकि यदि वह ऐसा करेगी तब वह भी स्वयं जातिच्युत हो जायगी । ''

'' लेकिन आप जातिच्युत हो कैसे गये ? ''

'' ऐसा हुआ कि मैं व्यापार के सिलसिले में बूटावल गया था और जब इस स्थान को लोट रहा था तब रास्ते मे बिमार पड़ गया और एक सराय में ठहर जाना पड़ा । वहाँ एक नीचले जाति के व्यक्ति के सिवाय कोई मेरी देखभाल करनेवाला नही था और चूंकि मैंने उसके हाथ का पकाया हुआ भोजन खाया इसलिये मैं जातिच्युत हो गया । कृपा कर मुझे रातभर ठहरने दीजिये । प्रातःकाल मैं पुलिस-थाने जाऊँगा, जो कुछ हुआ वह बतलाऊँगा और जुर्माना पटाऊँगा । वे मुझे जाति-प्रवेश का प्रमाणपत्र देंगे तब मुझे फिर से मेरी जाति मिल जाएगी । तब मैं घर जा सकूंगा और तब मेरी पत्नी मुझे अंदर आने देगी । ''

नेपाल में बहुत बार इस प्रकार की जो बातें मुझे देखने को मिली, उसका यह एक उदाहरण है । सचमुच ही वहाँ जातिव्यवस्था बहुत कठोर थी । यहाँ तक कि जातिव्यवस्था की आलोचना करना भी वहाँ कानून के विरुद्ध था । इस बात के कुछ ही वर्ष पहले एक नेपाली बौद्ध भिक्षु ब्रह्मदेश में शिक्षा पाकर वापस आनेपर जाति-व्यवस्था के विरुद्ध यह कहकर बोलने लगा कि बौद्धों को जातिप्रथा का पालन नहीं करना चाहिये । परिणाम यह हुआ कि वह पुलिसद्वारा गिरफ्तार कर लियां गया । और पुश्तैनी प्रधान मंत्री के सामने उपस्थित किया गया । प्रधानमंत्री ने उसका कथन सुनकर यह कहते हुये '' हम अपने नेपाल में इस प्रकार की बात नहीं चलने दे सकते '' स्वयं उस भिक्षु को कोड़े लगाये । नेपाल में यह कहानी बहुत प्रसिद्ध थी और बरसों बाद मैंने उसे उसी भिक्षु के मुख से सुनी थी । जब मैं नेपाल की यात्रा पर था तब निश्चितही वह देश धर्म-निरपेक्ष नहीं था ।

थाइलैंड धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं है । थाइलैंड में बौद्ध धर्म शासकीय धर्म

है और भिक्षुसंघ शिक्षा विभाग द्वारा नियंत्रित किया जाता है। बौद्ध धर्म वहाँ शासकीय धर्म होते हुये भी सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता का व्यवहार किया जाता है, और सर्व अ-बौद्ध धर्मों को पूरी स्वतंत्रता है। थाइलैंड के राजा की एक उपाधि ' सभी धर्मों के संरक्षक ' है। इस प्रकार राजा स्वयं बौद्ध होते हुये भी वह केवल बौद्ध धर्मका ही नहीं परंतु हिंदू, ईसाई, और इस्लाम धर्म का भी संरक्षक है।

मलैशिया भी धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं है। इस्लाम वहाँ का राजकीय धर्म है और वहाँ धार्मिक सहिष्णुता बहुत अल्प मात्रा में है। मलैशिया में वस्तुतः किसी भी मुसलमान को अपना धर्म परिवर्तन करने की इजाज़त नहीं है कोई चाहते हुये भी इस्लाम धर्म का त्याग नहीं कर सकता। ऐसी परिस्थिती प्रायः मुसलमानी देशों मे अक्सर पाई जाती है। इस्लाम के त्याग के लिये परम्परागत दण्डविधान मृत्यू है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका सरकारी तौर पर धर्म-निरपेक्ष राज्य है किन्तु पूरी तरह से वह धर्म-निरपेक्ष नहीं है। इस बात में वह युनाइटेड् किंग्डम् से किंचित् मिलता-जुलता है। स्रष्टा अर्थात् ईश्वर को स्वतंत्रता के घोषणापत्र में याद किया है। अदालत में बयान देने के पूर्व लोग धार्मिक कसम लेते हैं और वहाँ के विद्यालयों में ईसाई धर्म की शिक्षा दी जाती है दूसरे धर्म नहीं पढ़ाये जाते।

इसी प्रकार इस विषय में अन्य कई देशों के भी उदाहरण पर उदाहरण दिये जा सकेंगे किंतु मैंने अभीतक जितने उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, मैं समझता हूँ कि वे पर्याप्त हैं। मैंने प्रारम्भ में ही बतलाया है कि भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है। भारत में कोई भी अपनी पसंद का धर्म अपनाने के लिये स्वतंत्र है। राज्य न तो किसी विशेष धर्म की तरफदारी करता है और न किसी धर्म के खिलाफ किसी का पक्षपात करता है। वस्तुतः कानून तो यही कहता है। इसीलिये भारत में अनेक धर्मों का रहना सम्भव है। अर्थात भिन्न भिन्न धर्मावलम्बियों का एक साथ सुख शांति से रहना सम्भव हुआ है। इस तरह भारतीय समाज एक अनेकवादी समाज है- एक ऐसा समाज जिसमें अनेकानेक विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक प्रवाहों का सह- अस्तित्व है। यद्यपि इनमें प्रमुखता हिंदू विचारधारा की है किंतु इसका कारण यह नहीं है कि उसे कोई

विशेष राजकीय मान्यता प्राप्त है। इसका सरल कारण हिंदुओं का बहुसंख्यक होना है।

यहाँ पर मैं एक प्रश्न उपस्थित करना चाहता हूँ। हमने देखा कि धर्म-निरपेक्ष राज्य न तो किसी धर्म का पक्ष लेता है और न किसी का विरोध करता है। धर्म-निरपेक्ष राज्य में भिन्न भिन्न धर्म शांति के साथ समभाव से रहते हैं। किंतु वह कौनसी चीज है जो इस शांतिपूर्ण सहअस्तित्व को सम्भव बनाती है? केवल राजसत्ता का शक्तिशाली होना नहीं कहा जा सकता। इसे स्वयंपूर्ण, पर्याप्त नहीं मान सकते क्योंकि धार्मिक भावनायें बड़ी प्रबल होती हैं। तब, वे कौनसे सामान्य तत्त्व हैं जिन्हे सभी धर्मवाले हृदय से स्वीकार करते हैं और जो उन्हें एकही राज्य में साथ-साथ रहने योग्य बनाते हैं? दूसरे शब्दों में उनके शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के कौनसे सिद्धान्त हैं? यही वह प्रश्न है जिस पर मैं आज कुछ चर्चा करना चाहता हूँ।

इस विषय पर बहुत कुछ कहा जा सकता है किन्तु में केवल एक ही प्रधान बात कहना चाहता हूँ, या यूँ कहिएँ कि एक मुख्य तत्व प्रतिपादित करने जा रहा हूँ जो, मैं समझता हूँ, सब की आधारशिला है। जो अनुत्तर सिद्धान्त एकही राज्य में भिन्न भिन्न धर्मों को साथ- साथ रहने देता है वह, मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य है, यह है। सभी धर्मों को अगर एकही राज्य में रहना चाहते है तो इस सिद्धांत का स्वीकार करना ही होगा। स्पष्ट या अस्पष्ट रूपसे, चाहते हुये या अनचाहे उन्हें तो इसे स्वीकार करना ही पड़ेगा। उन्हे यह स्वीकार करना होगा कि मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य है और उसके पश्चात् वह एक हिंदू हैं, बौद्ध, मुसलमान या ईसाई है, इत्यादि। यदि हम यह मानकर चलते हैं; कि पहले और सबसे पहले हम मनुष्य हैं, तब ही हम दूसरों के साथ मनुष्यता का रिश्ता जोड़ सकते हैं; हम एक दूसरो के साथ मनुष्यता का व्यवहार कर सकते हैं मनुष्य बनकर साथ-साथ रह सकते हैं। एकही राज्य में साथ साथ रहने में हिंदू या मुसलमान होना कोई आशय नहीं रखता।

मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य है यह विचार आधुनिकतर है। बहुत समय तक यह समझा जाता था कि मनुष्य पहले और सबसे पहले एक विशिष्ट जमात का अंग होता है और वे जो मनुष्य दूसरी जमात के थे, यूँ कहिये कि,

वे मानव प्राणिही नहीं समझे जाते थे और उनकी हत्या भी अपराध नहीं हुआ करता था । अपनी ही जमात के सदस्यों की हत्या करना जुर्म था । यह 'आदिम' प्रकार का विचार करने का तरीका अब भी कुछ धर्मों में बहुत मज़बूत है ।

अब अगर हम यह तत्त्व स्वीकार करते हैं कि मनुष्य पहले मनुष्य है तब विद्यमान-सहविद्यमान दुनियाँ के सभी धर्मों पर कुछ अनिवार्य परिणाम होते हैं । एक परिणाम विशिष्ट है । यदि कोई व्यक्ति पहले और सबसे पहले मनुष्य है और बाद में वह हिंदु, बौद्ध, मुसलमान, ईसाई इत्यादि है, तब इसका यह मतलब होगा कि मनुष्य होना अधिक महत्त्वपूर्ण है और धर्म उसकी तुलनामे कम महत्त्व का होता है । इसका मतलब है कि धर्म मनुष्य के लिये है मनुष्य धर्म के लिये नहीं । धर्म का सही उद्देश्य मनुष्य के विकास में उसे सहायता करना है, याने उसे अच्छा मनुष्य बनाने में सहायक होना है; एक पूर्ण विकसित मनुष्य बनाने में या जैसा कि बौद्ध धर्म में हम कहते हैं कि बुद्ध या पूर्ण ज्ञानी बनाने में सहायक होना है ।

जिसे हम सारगर्भ मानवता-वादी दृष्टिकोण कह सकते हैं, कि मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य है और मनुष्य, धर्म से अधिक महत्त्वपूर्ण है तथा धर्म मनुष्य के लिये है, उसे सभी धर्म स्वीकार नहीं करते है । जब किसी धर्म-निरपेक्ष राज्य की चौखट में एक अ- मानवतावादी धर्म दूसरे-मानवतावादी हों या अ-मानवतावादी हो-धर्मों के साथ-साथ रहता है, तब क्या होता है ? होता यही है कि उसे बदलना पड़ता है । आइये, इस बातपर थोड़ा विचार करें । आइये, दो एक गतियों पर दृष्टिपात करें जिन में पड़कर कुछ धर्मों को विवश होकर बदलना पड़ा है ।

पहले ईसाई धर्म को लीजिए । भले ही कोई ईसाई धर्म के विषय में कुछ कहें, किंतु केवल ईसाई बने रहना वस्तुतः सम्भव नहीं है । आप भला प्रयत्न करें परंतु आपको यह अशक्यप्राय है । आपको या तो प्रोटेस्टैंट या रोमन कैथोलिक या कोई और पंथ का ही ईसाई होना पडेगा उसी प्रकार जिस तरह आप केवल हिंदु नहीं हो सकते, जब तक आप ब्राह्मण हिंदु, कुनबी हिंदु, चमार हिंदु या ऐसेही कोई अन्य प्रकार की जाति के हिंदू नहीं बनोगे । नहीं

तो मुझे एक हिंदु दिखाइयें जो केवल हिंदु है। बीस वर्षों की अवधि में भारत में मुझे ऐसा कोई व्यक्ति अभी तक नहीं मिला है। प्रोटेस्टैंट सम्प्रदाय से रोमन कैथालिक सम्प्रदाय अवश्य प्राचीन है। प्रारम्भ में सभी पश्चिमी योरप के ईसाई रोमन कैथोलिक थे। प्रोटेस्टैंट सम्प्रदाय सोलहवी शताब्दी के मध्य अस्तित्व में आया। उसके पहले योरप रोमन कैथोलिक चर्च से शासित था। रोमन कैथोलिक धर्म के अनुसार आप पहले ईसाई- याने रोमन कैथोलिक- और बाद में मनुष्य होते थे। वस्तुतः केवल ईसाई ही मनुष्य थे। दूसरे लोग केवल ' पॅगन ' (नास्तिक, काफिर या बिना धर्मवाले, जंगली, मुल्की, असभ्य) थे। उनकी आप हत्या करे तो कोई पाप नहीं था। वह तो एक पवित्र कार्य था। बस इतनाही नहीं था। चूँकि आप पहले और सबसे पहले एक ईसाई थे, आप ईसाई के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकते थे। आपको ईसाई धर्म का परित्याग करने की या कोई दूसरा धर्म स्वीकार करने की आज्ञा नहीं थी। यदि आपने ऐसा कुछ किया तो आपको प्राणदण्ड मिलता था- प्रायः खूँटे को बाँधकर जिंदा जला दिया जाता था। यह परिणाम हजारों नहीं लाखों व्यक्तियों को भुगतना पड़ा है। क्योंकि उस समय पश्चिमी योरप में रोमन कैथोलिक चर्च के हाथ में राजनैतिक शक्ति थी और ईसाई धर्म वहाँ सभी देशों में राजधर्म था।

यह स्थिती कई सौ साल तक रही। अब परिस्थिति बदल गई है। जैसे अनेकों पूर्वी योरप के देशों में, वैसे बहुत से पश्चिमी योरप के देशो में भी चर्च के पास अब राजकीय शासन-शक्ति नहीं रही है और ईसाई धर्म राजधर्म नहीं रहा है। अब कोई ईसाई चाहे तो अपना धर्म परिवर्तन करने के लिये स्वतंत्र है और इसके लिये चर्च उसे नहीं रोक सकता। दूसरे शब्दों में ईसाई धर्म को विवश होकर यह मानना पड़ा कि- मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य है। ईसाई धर्म अधिक मानवतावादी बना दिया गया है। उसे लाचार होकर बदलना पडा क्योंकि अब उसका अस्तित्व एक धर्म-निरपेक्ष राज्य के भीतर है।

बहुत कुछ ऐसाही इस्लाम के सम्बंध में है। भारत में रहनेवाला मुसलमान अपना धर्म बदलने के लिये आज़ाद है। वह इस्लाम का त्याग करने के लिये

स्वतंत्र है और कोई भी दूसरा धर्म ले सकता है क्योंकि भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है। किंतु एक मुसलमान जो इस्लामी राज में रहता है अपना धर्म बदलने के लिये स्वतंत्र नहीं है। यदि उसने ऐसा करने का प्रयत्न किया तो उसे प्राणदण्ड मिलेगा। मध्यपूर्व में जो इस्लाम राज्य हैं, वहाँ आज भी ऐसी परिस्थिती है। भारत में इस्लाम को विवश होकर बदलना पड़ा है। क्योंकि भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है। इसलिये उसे मजबूरन अधिक मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाना पड़ा है।

अब हम हिंदु धर्म पर दृष्टि डालें। मैंने प्रारम्भ में ही कहा है कि एक व्यक्ति केवल हिंदू हो नहीं सकता। आपको किसी विशिष्ट जाति का होना ही पड़ता है जैसे ब्राह्मण हिंदु, कुनबी हिंदु, चमार हिंदु आदि। जाति स्वभावतः जन्म पर आधारित होती है। आप ब्राह्मण हैं क्योंकि आपके माता-पिता ब्राह्मण थे, कुनबी क्योंकि माता- पिता कुनबी, चमार क्योंकि आपके माता-पिता चमार थे। इस प्रकार हिंदु विभाजित हैं और हिंदु समाज अनेक जातियों में, जो विशेषज्ञों के मतानुसार दो हजार से कम नहीं हैं, विभाजित है। ये जातियाँ और इनके परस्पर आपसी नाना प्रकारके सम्बंध उसे बनाते हैं जिसे हम जाति-व्यवस्था कहते हैं। हर एक जाति दूसरी जाति या जातियों से उच्च होती है, हर जाति दूसरी किसी न किसी जाति या जातियों से नीची होती है, सिवाय अर्थात उसके जो सबसे ऊपर और वह जो सबसे नीचे है। इस दूसरी बातके सम्बंध में अर्थात् कोन सब से उच्च है और कौन सब से नीच है, कोई मतैक्य नहीं है, क्योंकि सभी ऊँची जाति के होना चाहते हैं और कोई नहीं चाहते कि वे नीची जाति को ले रहें। इस लिये जाति व्यवस्था, जैसा कि डॉ. आम्बेडकर ने कहा, क्रमिक असमानता की व्यवस्था (System of graded inequality) है।

मैं आज इस प्रश्न पर चर्चा नहीं करना चाहता कि क्रमिक असमानता वाली जाति-व्यवस्था पुरातन हिंदू धर्मशास्त्रों के अनुसार है या नहीं। मेरा विषय है : जाति-व्यवस्था का आज का वास्तविक स्वरूप और जैसी भी वह है क्या वह अनुवंशिक सिद्धान्त पर आधारित है और क्रमिक असमानता की ही सामाजिक व्यवस्था है ? तब, यह असमानता किसमें निहीत है ? मैं आपको

कुछ उदाहरण दूँगा। कुछ लोग जन्म के कारण शिक्षा से वंचित रखे गये थे। वे धनसंपत्ति अपनाने से वंचित रखे गये थे; सार्वजनिक कुओं से भी पानी लेने से वंचित रखे गये थे। यहाँ तक कि कुछ लोग अछूत कर दिये गये। मैं यह आवश्यक नहीं समझता कि उदाहरण पर उदाहरण देता ही चलूँ। विषमता-असमानताके उदाहरण, जैसे कि उपर बतलाये गये हैं, आप में से प्रत्येक को अच्छी तरह मालूम हैं। वस्तुतः यह पूरा विषय अत्यंत अरुचिपूर्ण और दुखदायी होने के कारण कोई भी इसपर व्यर्थ लम्बी चर्चा नहीं करना चाहेगा।

एक धर्म-निरपेक्ष राज्य में, खास कर एक प्रजातांत्रिक धर्म-निरपेक्ष राज्य में, सभी बराबर होते हैं, राजनैतिक और नागरी अधिकार सबको एक जैसे ही होते हैं। कानून की दृष्टि में सभी समान हैं। हर एक शिक्षा ग्रहण कर सकता है, संपत्ति अपना सकता है, सार्वजनिक कुए से पानी ले सकता है। किसी को भी अछूत नहीं रखा जा सकता। अब, समानता और असमानता परस्पर विरोधी हैं। दोनों एक साथ नहीं रह सकती। अतः जाति-व्यवस्था धर्म-निरपेक्ष राज्य में नहीं रह सकती-कभी नही; यदि वह राज्य सचमुच धर्मनिरपेक्ष हो तो! दूसरे शब्दों में, हिंदुधर्म को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य में रहते हुये विवश होकर बदलना ही पडेगा। उसे बाध्य होकर मानना पडेगा कि मनुष्य पहले और सबसे पहले मनुष्य हैं और बाद में वह किसी धर्म का अनुयायी है, बाद में वह किसी विशेष जाति का सदस्य है। यह प्रश्न यहीं समाप्त नहीं होता हैं। धर्म-निरपेक्ष राज्य में रहते हिंदु धर्म को जाति-व्यवस्था का निःशेष त्याग करना पडेगा। एक ही समय किसी को सम और अन्यों को विषम दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। राज्य की धर्म-निरपेक्षता सबको सभी के साथ समान व्यवहार करने के लिये बाध्य करती है; जाति-व्यवस्था का पालन नहीं करने के लिये बाध्य करती है। जब तक भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है वहाँ, जाँति-पाँति का पालन नहीं चलेगा, नहीं चलेगा। इसके विपरीत जब तक जाति-व्यवस्था बनी रहेगी तबतक भारत पूर्ण रूप से धर्म-निरपेक्ष राज्य कहनेका दावा नहीं कर सकेगा। मुझे विश्वास है कि विश्व हिंदु परिषद के सदस्य इन सब तथ्यों से अवगत हैं। जैसा कि मैंने शुरू में कहा है कि

आपके तीन मुख्य उद्देश्य हैं। इनमें से दूसरा उद्देश्य आधुनिक हिंदु समाज से भ्रष्टाचार और बुराइयों का उन्मूलन करना है। हिंदु समाज में सबसे बड़ा भ्रष्टाचार और सबसे बड़ी बुराई है अनुवंशिक तथा क्रमिक असमानता से भरी जाति- व्यवस्था।

अतः इस बिमारी से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है ? मेरी समझ में एक मात्र उपाय है। जाति अनुवंशिक सिद्धान्त पर आश्रित है। आप ब्राह्मण हैं क्योंकि आपका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ है। अतः जाति-व्यवस्था इस अनुवंशिकता के सिद्धान्त को नष्ट करने से नष्ट हो सकती है। किन्तु यह होगा कैसे ? यह उपाय है आंतर्जातीय विवाह-सभी जातियों में आतर्जातीय विवाह। विवाह सम्बंध से ही जाति नष्ट होती है। यदि ब्राह्मण परिवार नहीं रहेगा तब कोई ब्राह्मण परिवार में पैदा नहीं हो सकेगा और जब कोई ब्राह्मण परिवार में पैदा ही नहीं होगा तब कोई ब्राह्मण भी नहीं हो सकेगा। उसी प्रकार दूसरी जातियों के सम्बन्ध में होगा। इस प्रकार और केवल इसी प्रकार जाति-व्यवस्था का उन्मूलन होगा। मैं विश्व-हिंदूपरिषद के अपने मित्रों से प्रार्थना करूँगा कि वे इस आन्तर्जातीय विवाह के उपचार पर बहुत गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

मैंने धर्म-निरपेक्ष राज्य पर अपने विचार प्रदर्शित करते हुये ईसाई धर्म के बारे में कहा है, इस्लाम और हिंदू धर्म के सम्बन्ध में भी चर्चा की है। परंतु बौद्ध धर्म के विषय में क्या ? बौद्ध धर्म को एक धर्म- निरपेक्ष राज्य में रहते कोई कठिनाई नही है। निश्चितही एक धर्मनिरपेक्ष राज्य मे बौद्ध धर्म विकसित होता रहता हैं। यह इसलिये होता है क्योंकि बौद्ध धर्म सदा मनुष्य को अग्रस्थान और धर्म को पिछला स्थान देता रहा है। बौद्ध धर्म के अनुसार धम्म मनुष्य के विकास का साधन मात्र है। वह एक साधन है जिससे मनुष्य अच्छे मनुष्य बनते हैं, वे उत्तमोत्तम बनते हैं, वे बुद्ध बनते हैं। यह जरुरी नहीं है कि बौद्ध धर्म राजकीय धर्म हो जैसा कि थाइलैंण्ड में है। बौद्ध धर्म को राजाश्रय या प्रोत्साहन की कोई आवश्यकता नहीं है। विश्व में आज की प्राप्त परिस्थिति में जितना ही राजाश्रय कम हो उतना ही अच्छा है। बौद्ध धर्म केवल स्वतंत्रता चाहता है जो एक धर्म-निरपेक्ष राज्य दे सकता है-जैसा कि भारत। सचमुच

हम देख सकते हैं कि भारत जितना अधिक धर्म-निरपेक्ष होगा उतनी ही बौद्ध धर्म की वृद्धि होगी। उसी प्रकार जितना बौद्ध धर्म बढेगा उतना ही भारत धर्म-निरपेक्ष बनेगा। शायद यही भारत के राष्ट्रीय ध्वज पर अंकित जो अशोक चक्र-धम्म चक्र है उसका अभिप्राय है।

बौद्ध धर्म मनुष्य का धर्म है। यह स्वतंत्रता का धर्म है, समता का धर्म है, बंधुता का धर्म है। इस लिये स्वतंत्र और स्वावलंम्बी भारत का अधिकाधिक बौद्ध धर्म की दिशा में अग्रसर होना अनिवार्य है। यह अनिवार्य है कि चिन्तनशील हिंदू बौद्ध धर्म की ओर अधिक से अधिक उन्मुख हों, विशेषकर वें जो हिंदू समाज में से भ्रष्टाचार और बुराइयों को मिटाना चाहते हैं; विशेषकर वे जो विश्व हिंदू परिषद के सदस्य और सुहन्मित्र हैं जिन्होंने बहुत उदारतपूर्वक आज इस समारोह का आयोजन किया है।

❐

लेखक का अल्प परिचय

पू. भन्ते महास्थविर संघरक्षित आज के
आधुनिक जगत को एक उत्कृष्ट लेखक,
कवि, विचारवंत, भाष्यकार एवंम
कल्याणमित्र के रुपमें ज्ञात है ।

भारत में बौध्द धम्म का पुनरुत्थान करने
के लिए उनका बहुत बडा योगदान है ।
केवल भारत में ही नही, बल्की विश्व के
अनेक प्रमुख देशों में अन्तर्राष्ट्रीय बौध्द
संघटन स्थापित कर प. पू. डा.
बाबासाहेब अम्बेडकरजी की जागतिक
स्तर पर बौध्द धम्म का प्रचार एवंम प्रसार
की संकल्पना उन्होने अपने महत्प्रयासोसे
साकार की है ।

पू. भन्तेजी अपने सभी धर्मों के गहरे
अध्ययन से धर्म रहस्यो कि तथ्यता-
अतथ्यता को परखकर ज्यो स्वयं
मानवता धर्म प्रचार के अधिवक्ता है,
और जो धर्म-निरपेक्ष भारत के हितैषी है ।

यहाँ स्वतंत्र, समता और बंधुता के तत्व
समझाकर उन्होंने मानवी विकास के
मार्ग पर प्रकाश डाला है ।

"Wherever the Buddha's teachings have flourished,

either in cities or countrysides,
people would gain inconceivable benefits.
The land and pepole would be enveloped in peace.
The sun and moon will shine clear and bright.
Wind and rain would appear accordingly,
and there will be no disasters.
Nations would be prosperous
and there would be no use for soldiers or weapons.
People would abide by morality and accord with laws.
They would be courteous and humble,
and everyone would be content without injustices.
There would be no thefts or violence.
The strong would not dominate the weak
and everyone would get their fair share."

~THE BUDDHA SPEAKS OF
THE INFINITE LIFE SUTRA OF
ADORNMENT, PURITY, EQUALITY
AND ENLIGHTENMENT OF
THE MAHAYANA SCHOOL~

With bad advisors forever left behind,
From paths of evil he departs for eternity,
Soon to see the Buddha of Limitless Light
And perfect Samantabhadra's Supreme Vows.

The supreme and endless blessings
of Samantabhadra's deeds,
I now universally transfer.
May every living being, drowning and adrift,
Soon return to the Pure Land of
Limitless Light!

~The Vows of Samantabhadra~

I vow that when my life approaches its end,
All obstructions will be swept away;
I will see Amitabha Buddha,
And be born in His Western Pure Land of
Ultimate Bliss and Peace.

When reborn in the Western Pure Land,
I will perfect and completely fulfill
Without exception these Great Vows,
To delight and benefit all beings.

~The Vows of Samantabhadra
Avatamsaka Sutra~

詳細書名及內容大意:

1. DR. AMBEDKAR'S DHAMMA REVOLUTION:
   This shows how revolutionary Dr Ambedkar's conversion was and looks at alternative such as Communism.

2. DHAMMA AND THE SECULAR STATE:
   This shows how the Buddha's teaching stands for freedom in religion (i.e. no imposition, and no force) and a caste free society.

作　　者: SANGHARAKSHITA

宗　　派: 南傳
印度安貝卡博士 佛教復興運動
之相關著作

語　　文: 印度 HINDI 文

提供單位: THE JAMBUDVIPA TRUST,
DHAMMACHAKRA PRAVARTAN
MAHAVIHAR, INDIA
PRESIDENT, DHAMMACHARI
LOKAMITRA

提供日期: 1999 年 7 月

DEDICATION OF MERIT

May the merit and virtue
accrued from this work
adorn Amitabha Buddha's Pure Land,
repay the four great kindnesses above,
and relieve the suffering of
those on the three paths below.

May those who see or hear of these efforts
generate Bodhi-mind,
spend their lives devoted to the Buddha Dharma,
and finally be reborn together in
the Land of Ultimate Bliss.
Homage to Amita Buddha!

NAMO AMITABHA

南無阿彌陀佛

《印度 HINDI 文：1. DR. AMBEDKAR'S DHAMMA REVOLUTION
2. DHAMMA AND THE SECULAR STATE 合刊》

財團法人佛陀教育基金會 印贈

台北市杭州南路一段五十五號十一樓

Printed and donated for free distribution by

The Corporate Body of the Buddha Educational Foundation

11F., 55 Hang Chow South Road Sec 1, Taipei, Taiwan, R.O.C.

Tel: 886-2-23951198 , Fax: 886-2-23913415

Email: overseas@budaedu.org

Website:http://www.budaedu.org

This book is strictly for free distribution, it is not for sale.

यह पुस्तिका विनामूल्य वितरण के लिए है बिक्री के लिए नही ।

Printed in Taiwan

2,200 copies; August 2013

IN037 - 11551